प्रकाशक—

एo मुकर्जी,

नेशनल लिटरेचर कम्पनी

१०५, काटन स्ट्रीट,

कलकत्ता।

प्रथम बार

१९४१

मूल्य—१।

मुद्रक—

दुलीचन्द्र परमार

जवाहिर प्रेस

१६।१ हरिसन रोड

कलकत्ता।

भूमिका

हिन्दीके लेखकोंमें श्रीव्यथित हृदयजीका अपना एक खास स्थान है। इनकी लेखनीमें जो प्रवाह और ओज है, उसका अनुभव पाठकको इनकी रचनाकी कुछ पंक्तियां पढ़ते ही होने लगता है। ये भावना-प्रधान लेखक हैं, न कुछ चीजमे भी ये अथाह रस पैदा कर देते हैं। ये उन लेखकोंमें हैं, जो सम्पन्नोंकी कृपाकी परवा न करके केवल अपनी लेखनीके बलपर जीवित रहना चाहते हैं। यह मार्ग सरल-साध्य नहीं है। बड़े-बड़े दिग्गज इस मार्गपर आगे बढ़नेमें असमर्थ सिद्ध हुए हैं और विवश होकर पीछे लौटे हैं। अनेक कठिनाइयोंका सामना करते हुए भी ये अपने इस साधना और तपस्याके मार्गपर अविचलित बढ़े चले जा रहे हैं।

श्रीव्यथित हृदयने सैकड़ों पुस्तकें लिखी हैं। हिन्दीके पाठक इनसे परिचित हैं। इनकी पुस्तकोंके लिये भूमिकाकी ज़रूरत नहीं। और, फिर कोई अन्य व्यक्ति लिखे इसकी तो और भी जरूरत नहीं। यह जानते हुए भी मैं इस पुस्तककी भूमिका लिखनेके लिये उद्यत हुआ हूं। उनकी भक्ति यही है।

इस पुस्तकमें उन्होंने देश-विदेशके उन पुरुषार्थी महापुरुषोंका चरित अंकित किया है, जिन्होंने अपने-अपने देशोंके राष्ट्रीय-जीवनमें नई जान फूकी है। महात्मा गान्धी, लेनिन,

मुस्तफाकमाल, डिवेलरा, सनयातसेन आदि ऐसे ही महा-पुरुष हैं। इन समस्त शक्तिशाली आत्माओंका श्रीव्यथित हृदयने अपने यशके अनुरूप ही चित्रण किया है। पुस्तक पढ़िये तो जान पड़ता है जैसे कोई महाकाव्य पढ़ रहे हैं। ज़रा इन पंक्तियोंपर ध्यान दीजिये—

"वह साधन और सम्बलहीन होनेपर भी अपनी सूखी-सूखी हड्डियोंमें पुरुषार्थकी महाशक्ति छिपाये हुए सफलताकी ओर दौड़ा जा रहा है, और दौड़ा जा रहा है ऐसी स्थितिमें जब कि तोपें उसका मार्ग रोककर खड़ी हैं। और बम बिखरे हुये हैं, उसके मार्गमें दानोंके सदृश, वह तोपोंका मुंह बन्द कर देना चाहता है और बना देना चाहता है मानों बिखरे हुए बमोंको पथका फूल।"

इन पंक्तियोंमें कैसा प्रवाह है, कैसा रस है और कैसी भावुकता है? थोड़ेसे नपे-तुले वाक्योंमें महात्मा गान्धीकी क्या सच्ची तस्वीर खींची है। भाषाका यही मज़ा, कल्पना की यही उड़ान, रसका यही प्रवाह अन्ततक कायम है।

निश्चय यह पुस्तक तरुण भारतीयोंमें नवस्फूर्ति भरनेमें सहायक होगी और जो इसे पढ़ेंगे, वे इसपर मुग्ध हुये बिना न रहेंगे।

'दीदी' कार्य्यालय
प्रयाग
१८-७-४१

—श्रीनाथ सिंह

विषय-सूची

क्रम		पृष्ठ
१—महात्मा गांधी	... ...	१
२—लेनिन	....	२५
३—मुस्तफा कमालपाशा	... ...	४७
४—डीवेलरा	... ...	७१
५—सनयातसेन	... ...	९१
६—हिटलर	... ...	११०
७—मुसोलिनी	... .	१२६

खाली बोतल

यह श्री भगवतीप्रसाद बाजपेयी की कलापूर्ण कहानियोंका नवीनतम संग्रह है। कहानियां पाठक के हृदय पर एक अमर छाप लगा देती हैं।

पुस्तक सजिल्द, मूल्य केवल—१।)

छाया में

श्री 'पहाड़ी' की मनोवैज्ञानिक कहानियों का एक अनूठा संग्रह है। मनोवैज्ञानिक विश्लेषण जितनी सरसता और सरलतासे करते हैं, बस यह उनकी कृति पढ़नेसे ही विदित होता है। पुस्तक सजिल्द, मूल्य—१)

पड़ोसी

प्रेमचन्दजी के पश्चात् यदि ग्राम-जीवनके चित्रणमें कोई सफल हुआ है तो वह ठाकुर श्रीनाथसिंह हैं। 'पड़ोसी' की कहानियों में यथार्थ-वाद और आदर्श-वादका इतना सफल सम्मिश्रण हुआ है कि ग्राम्य-जीवनके सफेद और काले अंगोंका चित्रण तथा पथ-प्रदर्शन आप एक साथ ही होता जाता है। सजिल्द पुस्तक का मूल्य—१।)

महावर

श्रीमती उषादेवी मित्राकी सामयिक उत्कृष्ट कहानियोंका संग्रह है। कहानियां सरसता, मनोहरता और सामयिक-संदेश का वाहन करती हैं।

सजिल्द पुस्तक का मूल्य—१)

पथचारी

मानसिक उत्थान-पतन, जीवनके छन्दोंका चित्रण 'पथचारी' में अद्वितीय ढंगसे हुआ है। उपन्यासमें पात्रोंका चरित्र-चित्रण और कथनोपकथन विशिष्ट और परिष्कृत है। 'पथचारी' उषादेवी मित्राकी श्रेष्ठतम् कृतियोंमें से है। सजिल्द पुस्तक का मूल्य—१।)

भय्या अकिल बहादुर

हास्यरसावतार श्री जी० पी० श्रीवास्तवने भय्या अकिल बहादुर के द्वारा हिन्दुस्तानके प्रमुख नगरोंका ऐसा सुन्दर भ्रमण कराया है बस एक ढेले से दो चिड़ियाँ चित्त आती हैं। 'हलचल' का तो यहां तक कहना है कि, "पुस्तक क्या है, हास्यरसका 'शावर-बाथ' है। भीनी-भीनी फुहार लेते जी नहीं भरता।" सजिल्द पुस्तक का मूल्य—१)

वीर-गाथा

आचार्य श्री चतुरसेन शास्त्री की ओजमयी कृति जिसमें आन और धर्म पर मर-मिटनेवाला वीरत्व है। शास्त्रीजो की लेखनीमें ओज है, भाषामें अधिकार कर लेनेकी शक्ति है। सजिल्द पुस्तक का मूल्य—१)

ललिता

श्री यज्ञदत्त शर्मा एम० ए० का प्रगति-शील-सामाजिक उपन्यास जिसमें प्रेम-प्रणय और कर्त्तव्यका अमर द्वन्द्व है। उपन्यास-साहित्यमें यह एक नवीनताकी ओर इशारा करता है। मूल्य—१)

राजर्षि

श्रीयुत् सरयूप्रसाद पाण्डेय रचित एक ऐतिहासिक-खण्ड काव्य है। संस्कृतके रघुवंशका माधुर्य लेकर 'राजर्षि' हिन्दी-साहित्यमें उतरा है। प्राचीन और अर्वाचीनका अनूठा सामञ्जस्य इस काव्यमें है। हिन्दीमें इसकी टक्करके खण्ड-काव्य विरले हैं। मूल्य केवल—III)

मिलने का पताः—

नेशनल लिटरेचर कम्पनी,

१०५, काटन स्ट्रीट, कलकत्ता।

महात्मा गांधी

१

एक साधारण पिताका एक साधारण पुत्र ! वही पुत्र, जो आज समस्त संसारका सिर मुकुट बना हुआ है, और जो जगत्-की मानवताको एक नूतन संदेश दे रहा है। उसके संदेशको सुनकर, उसके जीवन-गानको दुहराकर आज संसारके बहुतसे मनुष्य धन्य बन गये हैं, जीवनकी वास्तविकताको समझने लगे हैं। वह भारत माताकी सूनी गोदका वैभव है, और वैभव है समस्त संसारका। कई सदियोंसे मानवताका ऐसा, अमूल्य वैभव, ऐसा नर-रत्न पृथ्वीपर न दिखाई पड़ा था। वह उतरा है गीताका सन्देश लेकर ! उसकी रग-रगमें अहिंसाका भाव है। मानव-

प्यारका पवित्र गौरव है। वह भारतका प्राण होने पर भी समस्त ससारको प्राणवान बना रहा है, जीवनकी एक अपूर्व ज्योतिका दान कर रहा है। वह अपनी अहिंसासे, अपने प्यारसे और अपनी मानवी भावनाओंकी शक्तिसे संसारके हृदयमें बसे हुये दानवका सदाके लिये सर्वान्त कर देना चाहता है। वह भारतके साथ ही साथ समस्त संसारको भी उस ओर ले जानेका प्रयत्न कर रहा है, जहाँ मानवता और मानवी कर्तव्योंके अतिरिक्त किसी भावनाको कोई स्थान ही नहीं। उसका पुरुषार्थ धन्य है, उसका साहस अजेय है। वह साधन और सम्बल-हीन होने पर भी अपनी सूखी-सूखी हड्डियोंमें पुरुषार्थकी महाशक्ति छिपाये हुए सफलताकी ओर दौड़ा जा रहा है, और दौड़ा जा रहा है, ऐसी स्थितिमे जब कि तोपे उसका मार्ग रोककर खड़ी हैं और बम बिखरे हुए हैं उसके पथमे दानोंके सदृश, वह तोपोंका मुँह बन्द कर देना चाहता है, और बना देना चाहता है, बिखरे हुये बमों को पथका फूल। उसे अपने पुरुषार्थ पर विश्वास है, अपनी शक्तिका भरोसा है! इसीलिये वह करोड़ों विघ्न-बाधाओंके होते हुये भी अपने पथपर चला जा रहा है, आगे बढ़ा जा रहा है।

वह महापुरुष है, समस्त मानव जातिका गौरव है। उजड़े हुये भारतने अपनी फटी हुई गूदड़ीसे उसे निकालकर अपनेको संसारमें अधिक गौरववान बना लिया है। उसीकी चमकसे, उसीकी ज्योतिसे आज उजड़ा हुआ भारत भी संसारके मध्यमें खिल-खिलाकर हँस रहा है, वह उजड़े हुये भारतकी शोभा है,

धन है, गौरव है, और है, न जाने क्या-क्या ? आज संसारके बड़े-बड़े राष्ट्र, ऐसे बड़े-बड़े राष्ट्र जो अपनी क्रान्तिके सम्मुख किसीकी सत्ताको कुछ समझते ही नहीं थे, एक स्थान पर खड़े होकर बड़े ध्यानसे दरिद्र भारतकी इस निधिकी ओर देख रहे हैं। उसने सचमुच लोगोंको चकित कर दिया है, आश्चर्यमें डाल दिया है, उसकी मानवी भावनाय आज बड़े-बड़े सत्ताधारियोंको भी उसकी ओर देखनेके लिये विवश कर रही हैं। उसने अपनी अहिंसा और अपने सत्यकी रागिणीसे सारे जगत्को मुग्ध कर लिया है। जगत्का कोई भी ऐसा देश नहीं, जहांके कुछ न कुछ आदमी उसकी रागिणो पर न रीझ उठे हों ! वह समस्त संसारके हृदयमें अपनी रागिणोके लिये सम्मान उत्पन्न करना चाहता है, और उत्पन्न करना चाहता है, मनुष्योंके कल्याणके लिये। वह चाहता है, संसारके मनुष्य एक दूसरेके भ्रातृ-बन्धनमें बंधे रहें ! आपसमें प्रेम करते रहें, और एक दूसरेके साथ मिलकर मानवताके विकासमें योग देते रहे ! वह इस युगमें भी, जब कि तोपें गरज रही हैं, विषैली गैसें आकाशसे बरस रही हैं, बमके गोले ओलेके सदृश गिर रहे हैं, लोगोंको युद्धका प्यार बांट रहा है। वह कितना साहसी है, कितना पुरुषार्थी है। वही, जिसे सारा संसार महात्मा गांधीके नामसे जानता है, और जो अपनी सूखी हड्डियोंमें वज्रसे भी टक्कर लेनेकी महाशक्ति रखता है।

आज महात्मा गांधी संसारके गौरव हैं, भारतके प्राण हैं, और हैं, जगत्की समस्त मानवताकी शोभा, किन्तु एक दिन वे

मोहनदास कर्मचन्द थे, और थे एक साधारण पिताके साधारण पुत्र। ऐसे पुत्र, जिनमें न चञ्चलता थी, और न थी उपद्रवकारी भावनायें। अन्यान्य बालकोंकी भाँति खेल-कूदमें भी अधिक भाग न लेते थे। किसीके सामने जाते तो सकुचाते हुए, किसीके सामने बात करते तो लज्जा प्रगट करते हुये, स्कूलमें लड़के प्रायः इन्हें चिढ़ाया करते थे, इन्हें तरह-तरहके व्यंगपूर्ण वाक्योंसे बनाया करते थे। किन्तु ये कभी किसीसे बुरा न मानते, किसी की बातका कठोर शब्दोंमें प्रत्युत्तर न देते। इनके उस बाल-हृदयमें भी सहन करनेकी अपूर्व शक्ति थी। ये प्रायः अपने अपमानकी कड़वी घूँटको भी प्रसन्नतापूर्वक पी जाया करते थे, चोरी करना, असत्य भाषण करना, इनकी प्रकृतिके विरुद्ध था। ये जो कुछ करते थे, अपनी शक्तिसे करते थे, और करते थे अपने विश्वासके आधार पर। अपने इन्हीं गुणोंसे तो बालक मोहन जीवनके मैदानमें आगे बढ़ गया, और इतना आगे बढ़ गया, कि आज समस्त संसारको भी उसके अस्तित्व पर महान गर्व प्रगट करना पड़ रहा है।

बालक मोहन पुरुषार्थी था, सत्यका पुजारी था। बुरी भावनाओंसे वह हृदयसे घृणा करता था, उसके हृदयको स्वभावसे ही सत्य और धर्मप्रिय लगते थे। वह सत्य और धर्मसे प्रायः अधिक भयभीत-सा रहा करता था। वह कभी बुरा काम न करता, और यदि कभी संयोगसे उससे कोई बुरा काम हो जाता तो वह उसके लिये अपने हृदयमें रोता, आँसू बहाता और पश्चा-

त्ताप प्रगट करता। चोरी करके नाम कमाना तो वह पाप समझता था। सत्यमें उसका अटूट विश्वास था। वह कभी सत्य को छिपा कर न रखता था। वह अपमानित हो जाता, कष्टोंको झेल लेता, लोगोंकी कड़वी बातें सुन लेता, किन्तु सत्यको सबके सामने प्रगट कर देता। वह अपूर्व साहसी था, सत्यका अपूर्व प्रेमी था।

बालक मोहनके बाल-जीवनकी कुछ घटनायें बड़ी ही चमत्कारिणी हैं, बड़ी ही जीवन दायिनी हैं। उस समय ये घटनायें भले ही साधारण रही हों, किन्तु आज जब मोहन महात्मा गांधी के रूपमें पूजा जा रहा है, तब यह कहना पड़ रहा है, कि मोहनकी उन बाल घटनाओंमें महात्मा गान्धीके आजके जीवनका एक बड़ा ही सुन्दर तत्व छिपा हुआ था। देखिये उन घटनाओंको :—एक दिन बालक मोहनकी पाठशालामें डिप्टी साहब परीक्षा लेनेके लिये गये, बालक मोहन भी अन्यान्य बालकोंके साथ परीक्षा देनेके लिये बैठा। डिप्टी साहब लिखनेके लिये पांच शब्द बोले। मोहनने भी पांचों शब्द लिखे। किन्तु उसका एक शब्द ग़लत होगया। मास्टरकी दृष्टि मोहनके स्लेट पर पड़ी, मास्टरने मोहनको संकेत किया, और बार-बार संकेत किया, कि वह अपने आगेवाले लड़केकी स्लेट देखकर अपने शब्दको ठीक कर ले। किन्तु मोहनने मास्टर साहबके संकेतकी ओर ध्यान ही न दिया। उसे कम नम्बर मिले, किन्तु उसने छिपकर दूसरे लड़केकी स्लेटकी ओर न देखा। उसके हृदयमें सत्यका भय था। एक

अदृश्य शक्तिका भय पापकी ओर अग्रसर होनेसे उसे रोका करता था। उसे दूसरोंकी वस्तुको अपनी बनानेमें सन्तोष न होता था। फिर वह मास्टर साहबकी आज्ञा मानकर दूसरे लड़केकी स्लेट कैसे देखता? उसके जीवनमें भावी पुरुषत्वके जो तत्व छिपे हुए थे, उसे बुरे पथ और बुरी भावनाओंकी ओर जानेसे रोका करते थे।

एक दूसरी घटनामें बालक मोहनने अपने पवित्र हृदयका बड़े ही साहसके साथ परिचय दिया था। बालक मोहन उन दिनों एक स्कूलमें पढ़ रहा था। स्कूलके एक बुरे लड़केका उसका साथ होगया। उस लड़केने मोहनको भी अपने सांचेमें ढाल लिया। उसके साथ ही साथ मोहन भी बीड़ी-सिगरेट पीने लगा, और अपने पितासे छिपकर गोश्त भी खाने लगा। बुरी भावनाओंमें अग्रसर होनेके कारण मोहनका वह साथी ऋणी हो गया, मोहन अपने साथीको ऋणके बंधनसे छुड़ानेके लिये उपाय सोचने लगा। मोहन अपने साथीको सुख-शांति देनेके लिये अपने घरमें चोरी त३. करनेके लिये तैयार होगया। वह अपने छोटे भाईके सोनेके कड़ेमेंसे कुछ सोना काट ले गया, और अपने साथीको ऋणके बंधनसे छुड़ा दिया। किन्तु साथ ही मोहन अधिक चिन्तामें भी पड़ गया, वह अपने पिताका अधिक सम्मान करता था। उसने सोचा, जब पिताजीको यह बात मालूम होगी, तब वे कितने दुःखी होंगे, कितने पीड़ित होंगे। इसी भावनाने मोहनके हृदयको आकुल बना दिया। वह मन ही मन अपने इस कुकृत्यपर

पश्चात्ताप प्रगट करने लगा। वह अपने पिताके पास गया। उन दिनों उसके पिता रुग्णावस्थामें चारपाई पर पड़े थे। उसने एक पत्र द्वारा सारी बातें खोलकर पिताके सम्मुख रख दीं, और साथ ही उनसे क्षमाकी याचना भी की, उसके उस पत्रमें एक ऐसी पवित्र और पश्चात्तापकी भावना थी, कि उसे पढ़कर उनकी आंखोंसे प्रेमके आंसू से छल छला उठे थे।

बालक मोहनका मन अत्यन्त पवित्र था। सत्यकी ज्योति प्रतिक्षण उसके हृदयको आलोकित किये रहती थी। वह इतना सीधा था, इतना सरल था, और इतना सत्य था, कि उसके हृदय पर किसी दूसरे रंगका प्रभाव ही न पड़ता था। वह अपने एक रंगमें रंगा हुआ बराबर आगे बढ़ता गया। आज जब मोहन महात्मा गाधी है, भारतका गौरव है; और है संसारकी मर्यादा. तब भी वह अपने उसी रंगके साथ आगे बढ़ता जा रहा है! उसका वह रंग, सत्य, अहिंसा, दयालुता, और अनेक मानवी भावनाओंका संमिश्रण है। उसकी ज्योति अपूर्व है, चमत्कार-पूर्ण है!

२

वह युवक! वही; बालक मोहन, जिसके हृदयमें सत्यकी ज्योति थी; धर्मकी प्रबल भावना थी, और थी सरलताकी एक दिव्य प्रतिमा! किन्तु अब वह बालक न था, अब वह युवक था, अवस्था वृद्धिके साथ ही साथ उसकी मानवी भावनायें भी अधिक प्रबल हो गई थीं। वह पहलेसे भी अधिक सत्यमें श्रद्धा

प्रगट करने लगा था, धर्मका प्रेमी बन गया था। उसका हृदय अधिक सरल था, सांसारिक भावनाओंसे बिलकुल अनभिज्ञ था। किन्तु उसके उस सरल और भोले हृदयमें एक अद्भुत शक्ति छिपी हुई थी। उस दृढ़ शक्तिके प्रकाशसे उसका हृदय सदैव आलोकित-सा रहा करता था। वह कठिनसे कठिन कामोंको भी पूर्ण करनेकी अपनेमें शक्ति रखता था, वह भयानकसे भयानक विपत्तियोंको भी सहन करनेकी दृढ़ता रखता था। वह जिस वस्तुको लेकर एकबार प्रतिज्ञा कर लेता, उसे फिर सांसोंका अस्तित्व रहते हुये कदापि न छोड़ता। विपत्तियाँ आतीं, उन्हें गले लगाता, बाधायें सामने खड़ी होतीं, उनका आलिंगन करता किन्तु अपनी प्रतिज्ञाको न तोड़ता, न छोड़ता। उसके उस युवक मनमें अपूर्व साहस था, अपूर्व पुरुषार्थ था!

युवक मोहनदास जब हाई स्कूलकी परीक्षा समाप्त कर चुका, तब बैरिस्टरी पढ़नेके लिये विलायत गया। विलायत गया, वह एक प्रतिज्ञा लेकर, वचनकी एक कठोर जंजीरमें आबद्ध होकर। उसकी मांको यह भय था, कि मोहन विलायत जाकर मांस खाने लगेगा, शराब पीने लगेगा, और विलायती स्त्रियोंके साथ रस-रंग भी करने लगेगा। युवक मोहनका परिवार विशुद्ध वैष्णव था। मांस खाने और शराब पीनेको कौन कहे, उस घर में कभी कोई मांस और शराबका नाम भी न लेता था। माकी इस भय-भावनाको देखकर युवकको यह प्रतिज्ञा करनी पड़ी, कि वह कभी मांस हाथसे न छूयेगा, शराब न पीयेगा, और पर-

स्त्रियोंसे अपना सम्बन्ध न स्थापित करेगा। माको भी अपने इस युवक बेटेकी सरलता और सत्यता पर विश्वास था। उसने उसे विलायत जानेकी आज्ञा दे दी, और वह चल पड़ा, अपनी सात्विक वृत्तिको लेकर उस विलायतकी ओर, जहांके मानुषिक-जीवनका अधिकांश अस्तित्व शराब और मांस ही के ऊपर निर्भर-सा रहता है।

कैसी विचित्र थी उसकी प्रतिज्ञा, कितना पुरुषार्थ था उसकी प्रतिज्ञामें! जो उसकी इस प्रतिज्ञाको सुनता, वह हँस देता। कहता, तुम्हारी यह प्रतिज्ञा निजी अज्ञानतासे भरी हुई है। विलायती जीवनमें तुम इसका निर्वाह न कर सकोगे, न पाल सकोगे! किन्तु उसे अपने आत्म-बलपर विश्वास था। उसके सरल हृदयमें जो दृढ़ शक्ति विद्यमान थी, उसीके प्रोत्साहनसे उसका मन प्रतिक्षण प्रोत्साहित-सा रहा करता था। वह अपनी इसी दृढ़ भावना शक्तिको लेकर जहाज़ पर चला जा रहा था। जहाज पर और भी अनेक यात्री थे। थे ऐसे यात्री, जो सांसारिक प्रवंचनाओंको ही जीवनका महत्व समझे हुये थे। वह उन्हें घृणाकी दृष्टिसे तो न देखता, किन्तु उनसे दूर ही रहनेका प्रयास किया करता था। वह किसीसे बात न करता, अकेले ही रहता और अकेले ही खाता-पीता था। उस जहाज पर एक अंग्रेज़ यात्री भी था। अंग्रेज़को युवकके इस एकान्त जीवन पर अधिक आश्चर्य हुआ, उसने युवकसे मित्रतापूर्ण बातचीत करनी आरंभ की। बातोंके सिलसिलेमें अंग्रेजको यह बात ज्ञात होगई, कि

युवकने मांस न खाने, और शराब न पीनेकी प्रतिज्ञा की है। अंग्रेज़को युवककी इस प्रतिज्ञा पर अधिक आश्चर्य हुआ। उसने कहा, "जब यह जहाज़ विलायतके समीप पहुँचेगा, तब तुम्हारी यह प्रतिज्ञा न निभ सकेगी। विलायतमें तुम्हें विवश होकर मांस खाना ही पड़ेगा।" किन्तु उस अंग्रेज़ यात्रीको उस समय अधिक आश्चर्य हुआ, जब उसने देखा, कि विलायत के समीप पहुँचने पर भी उस युवकने अभी मांसको हाथसे भी न छुआ! अंग्रेज़ यात्रीने इस युवकके साहसकी बड़ी प्रशंसा की, और उसने एक प्रमाण-पत्र भी लिखकर युवकको दे दिया था।

युवकने जिस वीरता और साहसके साथ विलायतमें अपनी प्रतिज्ञाका पालन किया, वैसा क्या कोई कर सकेगा? विलायत-के अनैतिक जीवनमें एक युवक मांस न खाये, शराब न पीये, और स्त्रियोंके संसर्गमें न रहे, यह कितने साहस और कितने पुरुषार्थकी बात है। युवक मोहन आध-आध पेट खाकर सो जाता था, संकीर्ण कोठरीमें रहता था, किन्तु रहता था अपनी प्रतिज्ञाके साथ। उसे अपनी इसी प्रतिज्ञाके कारण अनेक आपदायें झेलनी पड़ीं, स्थान-स्थानपर निरादृत भी होना पड़ा, किन्तु फिर भी वह अपनी प्रतिज्ञाकी रक्षा करके अधिक प्रसन्न रहता था। युवक मोहनने विश्व-वन्द्य महात्मा गान्धीके रूपमें स्वयं अपनी आत्मकथामें लिखा है,—'मैं जिस घरमें रहता था, उसकी मालिकिन बहुत ही परेशान रहती थी। वह मेरे लिये खानेको बनाये तो क्या बनाये? सवेरे वह जईकी लप्सी तैयार

करके मुझे खानेको देती। मैं भर पेट वही खा लिया करता था। किन्तु दोपहर और सन्ध्याके समय मुझे एक प्रकारसे बिना कुछ खाये ही रह जाना पड़ता था।'

किन्तु भूखा रहनेपर भी युवक मोहन प्रसन्न रहता था, अपने कार्यमें संलग्न रहता था। विपत्तियों और बाधाओंने कभी उसके पुरुषार्थको कम न किया। जब कभी उस प्रकारकी कठिन स्थिति सामने आती, तब इतनी दूरपर भी उसे अपनी ममतामयी मांकी मूर्ति दिखाई देती थी, और दिखाई देता था वह समय, जब वह अपनी मांके सम्मुख खड़ा होकर मास न खाने और शराब न पीनेकी प्रतिज्ञा कर रहा था। वह अपनी माका अनन्य पुजारी था। उसके साथी उसे समझाते, कि क्या माँ यहाँ देख रही हैं, किन्तु उन्हें क्या मालूम था, कि उस युवकके सरल और पवित्र हृदयमें मांकी ममतामयी मूर्ति दृष्टिगोचर हुआ करती है। वे उसे भ्रष्ट करना चाहते थे, उसकी प्रतिज्ञाको तोड़ना चाहते थे, किन्तु वह सबकी उपेक्षा करके अपमानके कड़ुये घूँटको पी करके अपनी प्रतिज्ञापर अटल रहता था।। महात्मा गाँधीके रूपमें उसने स्वयं लिखा है—'मेरे एक मित्र मुझे प्रतिदिन मास खानेके लिये समझाते थे। वे इसके लिये तरह-तरहके प्रमाण भी दिया करते थे। किन्तु मेरी प्रतिज्ञाके सामने उनकी एक बात भी ठहर न सकती थी। दोपहरको मैं केवल रोटी, पालकका शाक, और मुरब्बा खाकर रह जाता था। रातको भी यही खाता था। रोटी-के दो-तीन टुकड़े मिलते थे, उनसे भला मेरा क्या होता? और

अधिक माँगनेमें लज्जा लगती थी। मेरे मित्र साहब मुझपर अधिक अप्रसन्न होते थे। वे कहते यदि तुम मेरे सगे भाई होते तो मैं तुम्हें अवश्य घर भेज देता। तुमने मूर्ख माताके सम्मुख जो प्रतिज्ञा की है, वह बिलकुल व्यर्थ है।'

किन्तु उन्हें क्या मालूम था, कि उस प्रतिज्ञामें एक नैतिक रहस्य छिपा हुआ है, युवकके भावी जीवनका मूल तत्त्व अन्तर्हित है। मित्र महोदयके लिये वह एक साधारण प्रतिज्ञा हो सकती है, किन्तु युवकका हृदय तो उसमें अपने भावी अमूल्य जीवनका आभास देखता था। इसीलिये वह निरादृत और अपमानित होनेपर भी उसे नहीं छोड़ता था, उसका परित्याग नहीं करता था। एक दिनकी बात है। युवक अपने मित्र महोदयके साथ एक होटलमें खाना खानेके लिये गया। होटलमें टेबिलपर खाने-पीने-की वस्तुयें सामने रक्खी गईं। युवक उन वस्तुओंको देखकर बड़ी चिन्तामें पड़ गया। सोचने लगा, कहीं इन वस्तुओंमें मांसका सम्मिश्रण तो नहीं है? अन्तमें उसने भोजन परोसने वालेको बुलाया। अभी वह उससे कुछ पूछ भी न पाया था, कि मित्र महोदय उसका तात्पर्य समझ गये। उन्होंने उससे डाँटकर पूछा, "क्यों क्या बात है?"

युवकने उत्तर दिया, "मैं यह जानना चाहता था, कि उसमें मांस तो नहीं है।"

बस, फिर क्या? मित्र महोदय क्रोधसे लाल-पीले हो गये। उन्होंने क्रोधके स्वरमें कहा,—"इस तरह जंगलीपन यहाँ न

चलेगा। यदि तुम्हें नियम पूर्वक भोजन करना हो तो करो, नहीं तो उठकर बाहर चले जाओ।"

युवक उठकर बाहर चला गया। निरादृत अवश्य हुआ, किन्तु उसका हृदय अधिक प्रसन्न था। अधिक आह्लादित था। वह अपनी प्रतिज्ञाकी रक्षाके लिये अपमानके कड़ुये से कड़ुये घूँट को पीनेके लिये प्रतिक्षण तैयार रहता था। वह पुरुषार्थी था, साहसी था, दृढ़ प्रतिज्ञ था। उसके पुरुषार्थ, उसके साहस और उसकी दृढ़ प्रतिज्ञासे टकराकर समस्त विघ्न-बाधायें छिन्न-भिन्न हो गईं, और वह विजयी हुआ, महाविजयी।

३

वह दृढ़-प्रतिज्ञ बैरिस्टर! वह सचमुच दृढ़-प्रतिज्ञ था, पुरुषार्थी था, और था अपूर्व साहसी। उसके साहस और उसके पुरुषार्थ-के सम्मुख बड़ी-बड़ी विपत्तियाँ भी फूलके सदृश कोमल बन जाती थीं। वह भयानकसे भयानक आपदाओंको भी हँसते-मुस्कुराते हुये बर्दाश्त कर लेता था। जीवन-युद्धका वह महा-विजयी कांटोंके पथपर भी मुस्कुराता हुआ आगे बढ़ाता था। उसका आत्मिक साहस, उसकी आत्मिक शक्ति धन्य है, महा धन्य है! बदलाकी भावनाको हृदयमें छिपाकर अत्याचार सहनेवाले संसारमें बहुत अधिक मिल सकते हैं, किन्तु संसारमें ऐसा विरला ही कोई मिलेगा, जो अत्याचारीके लिये भी अपने हृदयमें शुभ कामना रखता है, जो आघात करनेवालेके सामने अपने मस्तकको और भी अधिक झुका देता है, और जो लूटने वालोंके

समक्ष रख देता है, अपने समस्त वैभवोंको। संसारका वह 'बिरला' संसारका वह कोई हमारे महात्मा गाँधी हैं, जिन्होंने सचमुच मानव जीवनमें परिवर्तन कर दिया है, जीवनके वर्तमान युगमें क्रान्ति उत्पन्न कर दी है। ऐसी क्रान्ति उत्पन्न कर दी है, जिसे देखकर सारा संसार चमत्कृत हो उठा है, आश्चर्यमें पड़ गया है।

महात्मा गाँधी उन दिनों बैरिस्टर थे। किन्तु वे अन्यान्य बैरिस्टरोंसे बिलकुल भिन्न थे, बिलकुल विपरीत थे। उनके सरल हृदयमें देश भक्तिकी एक अद्भुत दृढ़ भावना छिपी हुई थी। और छिपी हुई थी बज्रसे अधिक शक्तिशालिनी एक महाशक्ति। इसी महाशक्तिने ही तो उन्हें दक्षिण अफ्रिकामें विजयी बनाया, गौरवान्वित किया। दक्षिण अफ्रिका ऐसे देशमें, जहाँ गोरोंके अत्याचारकी अग्नि भयङ्कर रूपसे प्रज्वलित थी, और जहाँ भारतीयोंकी मानवता दासताकी जंजीरोंमें जकड़ी हुई सिसकियाँ भर रही थी, मानवताके कल्याणके लिये अपने प्राणोंको लड़ा देना महात्मा गांधी ही ऐसे महापुरुषार्थियोंका काम है। उन्होंने अपने साहससे, अपने त्यागसे आज दक्षिण अफ्रिका ऐसे देशमें भी जीवनकी लहर दौड़ा दी है। आज वहाँ भी मानव जीवनमे एक परिवर्तन-सा उपस्थित हो उठा है। अब गोरोंका न वह अत्याचार है, और न उनकी वह दानवी लीला। महात्मा गांधीकी त्याग-शक्तिसे उन गोरोंके हृदयमें भी जो दिन-रात अत्याचारसे खेलते थे, और जो मानवताको सर्वनाशकी अग्निमें

झोंकनेमें ही अपने जीवनकी श्रेष्ठता समझते थे, मानवताकी भावनायें उत्पन्न कर दी हैं।

जीवन युद्धके इस महाविजयीको इसके लिये कितनी विपत्तियाँ उठानी पड़ीं, कितनी आपदायें झेलनी पड़ीं। किन्तु वह बराबर हँसता-मुस्कुराता हुआ अपने पथपर अग्रसर होता गया। मानवताके इस श्रेष्ठ दूतके साथ गोरोंने क्या-क्या नहीं किया? उसपर ईंटे फेंकी गईं, उसपर कोड़े चलाये गये, उसपर मल-मूत्रोंकी वर्षा की गई, उसे ट्रेनके डिब्बोंसे घसीटकर निकाला गया. किन्तु उसने कभी उफ न किया, कभी आघात करनेवालेके ऊपर प्रतिघात न किया। उसकी यही सबसे बड़ी महानता है, उसकी यही सबसे महान् विजय है। वह अहिंसा की महाशक्तिका उपासक है। उसकी इसी अहिंसा शक्तिसे गोरोंकी घृणित भावनायें टकराकर छिन्न-भिन्न हो गईं, और वह उनके अत्याचारोंकी प्रज्वलित अग्निमें कूदकर उसमेंसे हँसता-मुस्कुराता हुआ बाहर निकल गया। सारे संसारने उसके उस अलौकिक स्वरूपको देखा, और देखा, बड़े ही आश्चर्यके साथ! अपने उसी अलौकिक स्वरूपके कारण तो आज वह जगत्मे विश्व-वन्द्य महात्मा गांधीके नामसे सम्बोधित किया जाता है।

दक्षिण अफ्रिकामें महात्मा गांधीके कष्टोंकी कहानी बड़ी ही वीरतापूर्ण है, बड़ी ही साहस-दायिनी है। ऐसी जीवन कहानियाँ संसारके महापुरुषोंमें बहुत कम देखनेको मिलती हैं। बहुत कम देखनेको इसलिये मिलती हैं, कि महात्मा गांधीकी तरह संसार

का कदाचित् ही कोई महापुरुष निरस्त्रावस्थामें तोपोंके मुँहपर जाकर खड़ा हो गया हो, बमके गोलोंसे लदे हुये वायुयानोंका स्वागत कर रहा हो, और अत्याचारियोंके घोड़ोंकी टापोंके नीचे डाल दिया हो अपने वृद्ध शरीरको। दक्षिण अफ्रिकामें उन्होंने यही किया, और आज वे भारतवर्षमें यही कर रहे हैं। उन्हींकी शक्तिसे, उन्हींकी प्रेरणासे आज भारतवर्षके कोने-कोनेमें महात्मा गांधीकी अनेक मूर्तियां दिखाई दे रही हैं। ऐसी मूर्तियां दिखाई दे रही हैं, जो महात्मा गांधीके आदेशपर उन्हींके साथ-साथ तोपोंके मुँहपर खड़ी हो सकती हैं, बमके गोलोंका स्वागत कर सकती हैं, और डाल सकती हैं, अपनेको घोड़ेकी टापोंके नीचे। महात्मा गांधीने सबके सामने जीवन और मृत्युके रहस्यको प्रगट कर दिया हैं, और प्रगट कर दिया है, कर्त्तव्यकी उस श्रेष्ठताको, जो जीवन और मृत्युके बीचमें स्थित होकर मनुष्य की मानवताका विकास कर दान देता है।

हां, तो महात्मा गांधीके दक्षिण अफ्रिकाके जीवनकी कहानियां बड़ी सजीव हैं, अहिंसक भारतके लिये बड़ी ही प्राणदायिनी हैं। देखिये, उन कहानियोंमें छिपा हुआ महात्मा गांधीका पुरुषार्थ, और उनकी अहिंसक भावना। उन दिनों महात्मा गाधी नेटालमें रहते थे। कुछ दिनों तक नेटालमें रहनेके पश्चात् महात्मा गांधी प्रिटोरियाके लिये चल पड़े। उन्होंने रेलमें पहले दर्जेका टिकट लिया था। रातका समय था। भयानक शीत, जाड़ा पड़ रहा था। नौ बजेके लगभग

रेल मारिटज वर्ग पहुँची। स्टेशन पर गाड़ीके खड़ी होनेके साथ ही एक अंग्रेज़ यात्री उस डिब्बेके पास आया, जिसमें महात्मा गांधी बैठे हुये थे। उसने झाँककर देखा, प्रथम श्रेणीके डिब्बेमें एक भारतीय। उसका मस्तक ठनक उठा। वह लौटकर स्टेशन-में गया, और स्टेशनके एक कर्मचारीको अपने साथ लेकर आया, कर्मचारीने महात्मा गांधीसे कहा, कि तुम इस डिब्बेके नीचे उतर आओ। यह गोरोंके लिये है। महात्मा गांधीके पास प्रथम श्रेणीके डिब्बेका टिकट था। उन्होंने डिब्बेसे उतरना अस्वीकार कर दिया। उनके अस्वीकार करते ही एक सिपाही बुलाया गया, सिपाहीने महात्मा गांधीको घसीटकर डिब्बेसे नीचे उतार दिया, और उनके सामानको प्लेटफार्म पर फेंक दिया। महात्मा गांधी जाड़ेकी उस रातमें भी रातभर प्लेट-फार्मपर पड़े रहे, और वीरताके साथ उस शीतका सामना करते रहे !

महात्मा गांधी घोड़ा गाड़ी पर चढ़कर चार्ल्स टाउनसे जोहान्स वर्ग जा रहे थे। घोड़ा गाड़ी पर उन्होंने भीतरकी गद्दीका टिकट खरीदा था। किन्तु भीतर एक गोरा बैठा हुआ था। उसे यह स्वीकार नहीं था, कि कोई भारतीय उसकी बगलमें बैठे। इसलिये महात्मा गांधीको विवश होकर गाड़ी हाँकनेवालेके समीप बाहर ही बैठना पड़ा। कुछ देरके पश्चात् गोरेको हवा खाने और चुरुट पीनेकी इच्छा उत्पन्न हुई। वह भीतरसे निकलकर गाड़ी चलानेवालेके समीप बैठना चाहता

था। उसने एक फटा हुआ टाट अपने पैरोंके नीचे बिछाकर महात्मा गांधीसे कहा, 'तुम यहां बैठो, और मैं तुम्हारे स्थानमें बैठूँगा।' महात्मा गाँधीको उसकी यह बात बहुत ही अप्रिय ज्ञात हुई। वे अपना स्थान छोड़नेके लिये तैयार न हुये, महात्मा गांधीकी इस अस्वीकृतिसे गोरा क्रोधोन्मत्त हो उठा। महात्मा गांधी पर घूसोंकी वर्षा करने लगा। किन्तु महात्मा गांधी फिर भी अपने स्थानसे न हटे। गोरा जब घूसें चलाते चलाते थक गया, तब वह महात्मा गांधीको गालियाँ देने लगा। महात्मा गांधीने जिस धैर्यके साथ उसके घूसे और उसकी गालियाँ सहन की थीं, वैसा क्या कोई मनुष्य कभी सहन कर सकता है? इसीलिये तो लोगोंका कहना है, कि महात्मा गांधीके हृदयमे दैवत्वका निवास है, दैवी शक्तिका चमत्कार है।

एक बार महात्मा गांधी भारतवर्षसे दक्षिण अफ्रिका जा रहे थे। उनके साथ उनका परिवार भी था। दक्षिण अफ्रि-काके गोरोंको जब यह बात मालूम हुई, कि महात्मा गांधी फिर दक्षिण अफ्रिका जा रहे हैं, तब वे सबके सब क्रोधसे उन्मत्त हो उठे। इतने उन्मत्त हो उठे, कि महात्मा गांधीके जीवनका अन्त तक कर देनेके लिये तैयार होगये, अत्याचारी गोरोंकी क्रोधपूर्ण भावनायें महात्मा गांधीसे छिपी न थीं। वे गोरोंको भलीभाँति जानते थे, और जानते थे, उनके काले कारनामोंको। वे स्वयं भी कई बार गोरोंके अत्याचारकी अग्निमें झुलस चुके थे। किन्तु क्या वे गोरोंके क्रोध और उनके अत्याचारोंसे

भयभीत होकर सिसकती हुई मानवताकी चिन्ता छोड़ दें ? नहीं, इनसे यह न हो सकेगा ! उन्होंने दक्षिण अफ्रिकामें फूट-फूटकर रोती हुई भारतीय मानवताके उद्धारका बीड़ा उठाया था। वे गोरोंके क्रोध और अत्याचारकी प्रज्वलित अग्निमें भी जहाज़ पर से नेटालकी भूमि पर कूद पड़े। उन्होंने अपने बाल-बच्चोंको एक घोड़ा गाड़ी पर निर्दिष्ट स्थानमें सावधानीके साथ भेज दिया, और वे स्वयं चल पड़े पैदल। कुछ दूर जानेके पश्चात् ही गोरोंने महात्मा गांधीको घेर लिया। किसीने उनकी पगड़ी उतारकर फेंक दी, किसीने उनका कुरता फाड़ डाला। साथ ही लात, घूसोंकी वर्षा भी होने लगी। दूसरी ओरसे ईंट-पत्थर फेंके जाने लगे। कुछ लोगोंने उनके ऊपर पायखाने भी फेंक दिये। चारों ओरसे विपत्तियोंके बवण्डर मँडरा रहे थे, और महात्मा गाधी उनके मध्यमें शांतचित्त होकर खड़े थे। इसी समय पुलिस पहुँच गई और उसने महात्मा गांधीको गोरोंके हाथसे बचा लिया।

गोरे महात्मा गाधीके प्राण लेवा शत्रु थे, किन्तु फिर भी महात्मा गाधी सिंहकी भाँति अकेले विचरण किया करते थे। वे अनेक विघ्न-बाधाओंकी उपेक्षा करते हुये मानव-सेवाके मार्ग पर बराबर आगे बढ़ते गये। उन्होंने कारागारकी भी कठिनसे कठिन यंत्रणाये सहीं, किन्तु मानव-सेवाके अपने उज्ज्वल व्रतका परित्याग न किया। उनकी अहिंसा और सत्याग्रहकी महा-शक्ति उन्हें आगे बढ़नेके लिये प्रोत्साहन प्रदान करती रही।

अन्तमें अत्याचारियोंकी अत्याचारपूर्ण भावनायें अहिंसाकी महाशक्तिसे टकराकर छिन्न-भिन्न होगईं और महात्मा गांधी विजयी हुये, महा विजयी। आज भारतवर्षके साथ ही साथ सारा संसार भी महात्मा गांधीकी इस महान् विजयको गर्व और गौरवकी दृष्टिसे देखता है।

४

महात्मा गांधी जीवन और जागृतिकी मूर्ति हैं, उनकी रग-रगमें एक महान् पुरुषार्थ छिपा हुआ है। उनका पुरुषार्थ संसार के पुरुषार्थियोंके पुरुषार्थ से बिलकुल भिन्न है, बिलकुल अलग है। लेनिन, हिटलर, मुसोलिनी और कमाल पाशाका पुरुषार्थ, संसारके और भी व्यक्तियोंके हृदयमें जा सकता है, किन्तु महात्मा गान्धीका पुरुषार्थ, कदाचित ही से संसारमें किसी मनुष्य के हृदयमें विद्यमान हो! वह संसारके ऊपरका पुरुषार्थ है! वहाँ तक कदाचित् ही, किसी मनुष्यकी पहुँच हो, कदाचित् ही कोई उसके महान अस्तित्वको अपने जीवनमे घुला-मिला सके। इसीलिये तो आजके संसारमें महात्मा गांधीका स्थान सबसे अधिक उच्च है, इसीलिये तो आज संसारके बड़े-बड़े महापुरुष मुक्त कंठसे प्रशंसा करते हैं, और इसीलिये तो वे आज जगत्में विश्व-वन्द्य कहे जाते हैं। उन्होंने जगत्के बीचमें, ऐसे जगत्के बीचमें, जिसमें शक्तिके साथ हिंसक भावनायें क्रीड़ा कर रही हैं, भारत ऐसे विशाल राष्ट्रको अहिंसाकी शक्तिसे स्वाधीन करानेका बीड़ा उठाया है। कितना महान है उनका यह कार्य। एक ओर

बृटिश सरकारकी बड़ी-बड़ी तोपें हैं, बड़ी-बड़ी सैनिक शक्तियाँ हैं, और दूसरी ओर हैं, महात्मा गांधीके दुबले-पतले निरस्त्र सत्याग्रही। संसार महात्मा गांधी और महात्मा गांधीके अहिन्सक सत्याग्रहियोंकी ओर बड़े ध्यानसे देख रहा है.। बड़े ध्यानसे देख रहा है, इसलिये, कि आज सचमुच इस 'बूढ़े' अहिंसककी शक्तिको देखकर खूंख्वार बृटिश सिंह कम्पित हो उठा है, आज सचमुच उसकी सात्विक वृत्तियोंसे टकराकर आसुरी वृत्तियाँ छिन्न-भिन्न हो जाती हैं। बृटिश सरकार अपनी विशाल सैन्य-शक्तिके साथ एक स्थान पर खड़ी होकर देखती ही रह गई, और वह बूढ़ा तपस्वी दरिद्र भारतको अपने साथ लेकर स्वाधीनताके मैदानमें बहुत आगे निकल गया। बृटिश महाशक्तिने उसके पथको रोकनेका अथक प्रयास किया, किन्तु वह न रुका, न रुका। वह अपने सत्याग्रहकी महाशक्तिसे टक्कर लेता हुआ बहुत आगे निकल गया। इतना आगे निकल गया, कि आज उसे उस स्थानपर देखकर बृटिश सरकार भी काँप उठी है। और भयभीत होकर उसका सम्मान करने लगी है।

महात्मा गांधी अहिंसक हैं, सत्याग्रही हैं। उनके हृदयमें आँधीकी सी प्रचण्ड शक्ति है। क्रान्तिसे भी अधिक प्रगतिशालिनी स्फूर्ति है। वे जब आगे पैर बढ़ा देते हैं, तब फिर संसारमें ऐसी कोई शक्ति नहीं, कि जो उनके उठे हुए पैरको पीछे मोड़ सके। तोपोंकी गड़गड़ाहटमें, गोलियोंकी सनसनाहटमें और किरचोंकी चमचमाहटमें भी वे आगे बढ़ते ही जाते हैं।

सारे संसारने उनके इस उठे हुए पैरोंकी प्रगति देखी है। और देखी है, असहयोगके जमानेमें। महात्मा गांधीका पैर उठते ही सारा भारत आन्दोलित हो उठा। कोने-कोनेमें जीवन और जागृतिका महारव होने लगा। बच्चे, बूढ़े, जवान, सभी उस बूढ़े तपस्वीके साथ कारागारकी कोठरियाँ भरने लगे। असहयोगकी वह उन्नति, उन्नतिसे भी अधिक जीवनमयी थी, स्फूर्तिपूर्ण थी, और उसमें था. महात्मा गांधीका व्यक्तित्व, उनकी अहिंसाकी प्रेरणा। उसी बूढ़े तपस्वीने, क्रान्तिका रव-सा फूँक दिया था। बड़ीसे बड़ी हिंसक क्रान्तियोंको दबाने वाली बृटिश सरकार उस अहिंसक उन्नतिको देखकर कम्पित हो उठी थी। वह लाख चेष्टा करनेपर भी उसे न रोक सकी, उसके पथको न अवरुद्ध कर सकी। उसने उस अहिंसक उन्नतिके पथमें अपनी सैनिक शक्ति भी भिड़ा दी, किन्तु कौन रोक सकता है उसे? वह अहिंसककी क्रान्ति थी, सत्याग्रहका आन्दोलन था, और था, मानवी शक्तियोंका जमघट! किन्तु इसीको, जिसे रोकनेमें बृटिश महाशक्ति असफल प्रमाणित हुई थी, महात्मा गांधीने अपनी एक आवाजपर रोक दिया. और रोक दिया, एक नहीं तीन वार! १६३० और १६३१में भी वही युग था वही समय था! इन दो वीते हुए सनोंमें भी सारा भारत असहयोग ही की भाँति आन्दोलित हो उठा था, और बृटिश सरकार लाख चेष्टा करनेपर भी उसे न रोक सकी थी। किन्तु महात्मा गांधीके पैरोंके पीछे खिचते ही सारा आन्दोलन अपने आप

शान्त हो गया। सारी उन्नति अपने आप सो-सी गई। कितनी प्रभावमयी वाणी है उस बूढ़े तपस्वीकी! भारत ऐसे विशाल राष्ट्रको वह आत्मिक शक्तिके बंधनमें बांधकर बृटिश सरकार की तोपोंके मुँह पर खड़ाकर देना चाहता है। बृटिश सरकार उसकी इसी भावनाको देखकर कम्पित हो उठी है।

महात्मा गांधीका अस्त्र अजेय है, दुर्भेद्य है। जिस समय वे अपने अहिंसा और सत्याग्रह अस्त्रको लेकर आगे बढ़ते हैं, उस समय समस्त संसारमें एक तूफान-सा खड़ा हो जाता है। और तूफान खड़ा हो जाता है, विस्तृत बृटिश साम्राज्यमें! विशाल सैनिक शक्तियोंके होते हुए भी बृटिश सरकार सोचने लगती है, कि 'क्या करें? किस प्रकार उस अहिंसक क्रांतिकारी की प्रगतिको रोके! सन् १९३० का वह दिन नहीं भुलाया जा सकता, जिस दिन इस बूढ़े उन्नतिकारीने बृटिश सरकारके नमक कानूनको तोड़नेके लिये दांडीकी यात्रा की थी! उसका वह स्वरूप, उसकी वह क्रान्तिकारी भावना! आज भी लोगोंके हृदयमें पुरुषार्थका संचार करती है। उसकी यात्राके साथ ही साथ हजारों लाखों नर-नारी अपने-अपने घरोंसे निकल पड़े। और तोडने लगे बृटिश सरकारके नमक कानून! कौन कह सकता है, वह शक्ति हिटलरमें है मुसोलिनीमें है, और थी, लेनिन और कमाल पाशामें। अपनी एक-एक पद-गतिके साथ लाख-लाख मनुष्योंको बांधकर आगे ले चलना यह महात्मा गांधी ही का काम है। महात्मा गांधीका पुरुषार्थ, उनका दृढ़ संकल्प

और उनका साहस समस्त मानव जातिमें अपूर्व है, अद्वितीय है। आज इस दरिद्रावस्थामें भी भारत महात्मा गांधीके साहस और उनके पुरुषार्थसे अधिक धनी है, अधिक वैभववान है।

लेनिन

१

वह विद्यार्थी ! वही, जिसे आज सारा संसार लेनिन कहता है, और जिसने रूस ऐसे विशाल राष्ट्रको देखते-देखते जीवन और जागृतिके आलोकमें लाकर खड़ाकर दिया। सारा रूस जीवनके आलोकसे विहँस उठा, और विहँस उठी, उसकी आत्मा, उसका अन्तरतम। उसने अपनेको संसारमें धन्य बना लिया आज संसारमें उसका इतिहास गौरवपूर्ण है, उसकी राष्ट्रीयता आदर्शनीय है। किन्तु क्या तुम जानते हो, कि रूस अपने इस सुनहले संसारके प्रभात कालमें किसकी वन्दना करता है? उसी विद्यार्थीको, जिसे हम तुम लेनिन कहते हैं। जिसकी

वाणीमें सफलताकी शक्ति थी, और था जिसके पुरुषार्थमें, विजय-का उन्मत्त राग। जो अंधकारमें, कांटोंकी राहमें, और विपत्तियोंकी गोदमें भी हँसता-मुस्कुराता हुआ चलना जानता था। उसीने तो रूसकी आत्मामें बेकली उत्पन्न करके उसे जीवनके लोकमें पहुँचा दिया। सचमुच वह धन्य था, मानव-समाजके लिये पूजनीय था।

कांटोंके मार्ग पर हँसकर आगे क़दम बढ़ानेवाला वही लेनिन उन दिनों विद्यार्थी था। न उसे रूस जानता था, और न उसे संसार। वह जगत्के अन्यान्य विद्यार्थी ही की भांति जीवनकी सरितामें आगे बहा जा रहा था। किन्तु नहीं वह जीवन-क्षेत्रमें औरोंसे भिन्न था, बिलकुल दूसरोंसे विपरीत था। वह समय-पूजक था। अपने जीवनके एक-एक क्षणको कार्यमें लगाये रहता था। उसका काम क्या था ? पुन्तकोंका अध्ययन करना। वह अपने बड़े भाई अलेकज़ेण्डरके साथ सवेरे एक बग़ीचेमें बैठ जाता, और पुस्तकों तथा पत्रिकाओंका मनन करने लगता। इस प्रकार मनन करने लगता, कि एकबार वह फिर अपनेको भी भूल जाता। उसकी वह ज्ञान शीलता दिन भर इसी प्रकार जारी रहती। केवल सन्ध्या समय वह थोड़ी देरके लिये बाहर निकलता। टहलता, घूमता और अपने विचारके अपने सहयोगियोंसे तर्क-वितर्क करता इसके पश्चात्, फिर वही स्वाध्याय, फिर वही चिन्तन और फिर वही मनन !

वह विद्यार्थी, वहो लेनिन, पढ़ता था, अपने लिये नहीं

अपने प्यारे देशके लिये, अपने रूसके लिये। उन दिनों उसका रूस दरिद्रताका चीथड़ा लपेटकर ज़ारकी छत्र-छायामें सिसकियाँ ले रहा था। उसकी एक-एक आह उसाँससे निकल रहा था, वेदनाका करुण राग। विद्यार्थी उसी रागको सुनकर पुस्तकोंके पन्नोंमें खोज रहा था उसके उद्धारका उपाय। उसका बड़ा भाई अलेकज़ेण्डर भी उसका साथी था। दोनों एक साथ बैठ कर रूसके उद्धारके लिये उपाय सोचते, और करते आपसमे तर्क-वितर्क। कितना भयानक काम था वह! रूसके सम्राट ज़ारके विरुद्ध रूसके उद्धारकी बात सोचना! किन्तु दोनों पुरुषार्थी थे! देशके करुण चीत्कारने दोनोंको विकल बना दिया था। इसीलिये तो दोनों देशके करोड़ों मनुष्योंके लिये अपनी-अपनी जान हथेली पर लेकर घरसे निकल पड़े थे!

आखिर एक चढ़ गया, फाँसीके तख़्ते पर। वही, लेनिनका बड़ा भाई अलेकज़ेण्डर। देशकी पुकार पर मर मिटनेवालेको देशके स्वार्थी सम्राटने मिटा दिया। लेनिनने उस दृश्यको देखा। उनके विद्यार्थी जीवनमें छिपा हुआ उनका पौरुष जाग उठा। अन्तरतममें जलनेवाली आगको बलिदानकी इस आहुतिने भड़का दिया। विपत्तियों, बाधाओं और कठिनाइयोंके होने पर भी लेनिन, नहीं-नहीं हमारा विद्यार्थी, जीवन क्षेत्रमें आगेकी ओर दौड़ पड़ा। इस भयानक दौड़मे उसका साथी था, उसका पुरुषार्थ, उसकी अध्ययन शीलता और उसका परिश्रम। वह अपने इन्हीं तीनों सहचरोंकी शक्तिसे किसीको कुछ भी न

समझता !

उन दिनोंकी कठिनाइयोंके सम्बन्धमें एक स्थान पर स्वयं लेनिनने लिखा है : - "अलेकज़ेण्डरके बंदी हो जाने पर प्रायः सभी इष्ट-मित्रोंने हमारे यहाँ आना-जाना छोड़ दिया। हमारे पिताका बूढ़ा मित्र एक अध्यापक हमारे यहाँ चौपड़ खेलनेके लिये आया करता था। किन्तु इस घटनाके पश्चात् उसने भी आना बंदकर दिया।" अपने पुत्रसे मिलनेके लिये लेनिनकी वृद्धा माताको सेंट पीटर्स बर्ग अकेली ही जाना पड़ा था। मार्गमें उन्हें अनेक प्रकारकी असुविधाओं और कठिनाइयोंका सामना करना पड़ा था। लेनिनने बहुत प्रयत्न किया, कि यात्राके लिये उनकी माँ को कोई साथी मिल जाय, किन्तु कोई उनके साथ जानेको तैयार न हुआ !

यह थी, उस समयकी परिस्थिति, और यह था उस समयका रूसी समाज ! इसी भयानक परिस्थितिको चीरकर लेनिनको आगे बढ़ना था, और इसी मुर्दे समाजको पहुँचाना था, जीवनके आलोकमें ! धन्य है पुरुषार्थका पुजारी वह विद्यार्थी ! उसने सचमुच काँटोंकी राह पर चलकर उस मुर्देको उठाकर खड़ा कर दिया। आज वह मुर्दा हँस रहा है, विजयके गीत गा रहा है।

२

वह १८८९ का सन् था। रूस दुर्भिक्षमें फँसकर कंगाल हो उठा था। एक ओर कुछ लोग वैभवके साथ अठखेलियाँ कर

रहे थे, और दूसरी ओर कर रहे थे, करोड़ों मनुष्य दाने-दानेके लिये आर्त्तनाद! जो देशके प्रेमी थे, जिनके अन्तरतममें मानवताका देवता था, वे उस पुकारको सुनकर कंपित हो उठे। उन्होंने उनकी सहायताके लिये एक समिति बनाई। समितिमें एक युवक भी था। युवक!—हाँ युवक, क्रान्तिकारी विचारोंके साथ खेलनेवाला, संसार और संसारकी परिस्थितियोंको एक दूसरी ही दृष्टिसे देखनेवाला!! वह जब एक दिन समितिमें बोलनेके लिये उठा, तब उसने कहा,—'दुर्भिक्ष पीड़ितोंको सहायता करना व्यर्थ ही नहीं, बल्कि हानिकारक है। दुर्भिक्षका वास्तविक कारण है, शासन-व्यवस्था। हमे उसीको ठीक करनेका प्रयत्न करना चाहिये।" वह युवक लेनिन थे। लेनिनके शब्द-शब्दमे देश-प्रेमकी आग थी। राष्ट्रकी गरीबी और राष्ट्रके कंगालपन-को वे एक दूसरे स्थानसे देखते थे। उस स्थानसे देख रहे थे, जहाँ ज़ार अपने स्वेच्छाचारी सिंहासनपर बैठकर दोनों हाथोंसे अत्याचारकी अग्निमें गरीबोंकी आहुति दे रहा था। राष्ट्रकी कंगालीको दूर करनेके लिये ही वे उसीको उलटना चाहते थे, उसीकी जड़को उखाड़कर फेंकना चाहते थे। किन्तु उनकी बात किसीकी समझ हीमें न आती थी। वे अपनेको ठीक मार्गपर पाते किन्तु लोग उन्हें कहते, पागल, अज्ञान और आग्रही!

किन्तु क्या लेनिन इससे भयभीत हो गये? नहीं ज्यों-ज्यों लोग उनका विरोध करते, त्यों-त्यों उनके पुरुषार्थको और बल

मिलता, उनके साहसको और शक्ति प्राप्त होती। विरोधोंके बवण्डरमें भी वे साहसके साथ आगे बढ़ते ही गये। वे प्रतिदिन गरीबों और मजदूरोंके मुहल्लेमें जाते और उन्हें उनकी गरीबीका वास्तविक कारण समझाते। वे कहते थे उनके कल्याणकी बातें, किन्तु वे उन्हें अपना शत्रु समझते और समझते अपना विरोधी। लेनिन अपमानित होते, शब्दोंके कर्कश आघातको सहते, किन्तु फिर भी मजदूरोंके मुहल्लोंमें जाते, उन्हें समझाते, और उनके हितकी बातें बताते। मजदूरोंसे बातें करते समय वे स्वयं भी मजदूर बन जाते। उनकी वाणीमें एक मानवीय प्रेम होता और होती त्यागकी एक सुन्दर भावना। इसी प्रेम और इसी भावनाने तो उन्हें मजदूरोंके रूपमें बठा दिया और वे बन गये, उनके नेता, समस्त रूसके पूज्य, महापूज्य!

जीवन-मार्गपर अपनी दिशामें जानेवाले लेनिन अकेले थे। संगी-साथी कोई नहीं। जो दो-चार थे, वे भी अधकचरे थे, उन्हें सन्देहकी दृष्टिसे देखते थे। सभी लेनिनकी बातोंको हँसी समझते, और समझते, एक पागलका प्रलाप। लोग कहते, 'लेनिन जिस वस्तुका स्वप्न देख रहा है, वह वास्तवमें है स्वप्न ही! इसमें मजदूर-किसान हैं ही नहीं, फिर यहाँ उनका राज्य कैसे स्थापित हो सकता है?' किन्तु लेनिन संगी-साथियोंके अभावमें भी अपने पुरुषार्थके साथ अगे बढ़े जा रहे थे। विरोधका बवण्डर, निराशाका अन्धकार, परिस्थितियोंकी बाधा, यह सब होते हुए भी उनके लिये कुछ नहीं था। यदि उनके सामने कुछ

था, तो उनका उद्देश्य, उनका लक्ष्य। वे उसी लक्ष्यको देखते हुए दोनों बाहोंको फैलाकर आगे दौड़े जा रहे थे।

इस दौड़में उनका साथी था, उनका पुरुषार्थ, उनका परिश्रम और उनका गम्भीर ज्ञान। लेनिनका सारा समय उन दिनों मजदूरोंहीके साथ बीतता था। उनका हरएक काम मजदूरोंके लिये होता, और होता गरीब किसानोंके लिये। वे दिनभर मज-दूरों-किसानोंमें काम करते, उन्हें उनके हितकी बातें बतलाते और रातमें पर्चा लिखकर अपने हाथोंहीसे छापते थे। उन दिनों लेनिनके साथी बहुत कम थे, इसलिये लेनिनको दिन रात परि-श्रमकी आगमे जलना पड़ता था। लेनिनके परिश्रमको देखकर उनके साथियोंको भी अत्यन्त आश्चर्य होता था। लेनिनके एक साथीने एक स्थानपर लिखा है, कि इसकी सफल उन्नतिके कारण लेनिन नहीं, उनका परिश्रम और उनका पुरुषार्थ है।

लेनिनके परिश्रम और पुरुषार्थहीने तो रूसके मृतप्राय मजदूर समाजमें जीवनकी लहर दौड़ा दी। सभी मजदूर और किसान अँगड़ाइयाँ ले-लेकर उठ बैठे। चारों ओर मजदूरों और किसानों-के अधिकारोंकी आवाज़ ऊँची होने लगी। इधर आवाज़ ऊँची होने लगी, और उधर ज़ार भी अत्याचारोंके साथ खुलकर खेलने लगा। स्वयं लेनिन भी कई बार उसके अत्याचारोंके शिकार हुये! कई बार जेल गये, और देशसे बाहर निकाले गये। किंतु जेलमें, और देशके बाहर भी उनका पुरुषार्थ जागता रहा, हँसता रहा। वे भयङ्करसे-भयंकर विपत्तियोंको बर्दाश्त करके

भी अपने प्यारे देशको अपने लक्ष्यकी ओर आगे बढ़ाते गये। कारागारकी अंधकार पूर्ण कोठरीमें बंद रहनेपर भी उनकी आत्मा उड़-उड़कर मजदूरोंको उनका संदेश सुनाया करती थी। सैकड़ों-सहस्रों कोसोंके कटित निर्वासन कालमें भी वे अपने देशवासियोंके मध्यमें विद्यमान रहते थे। अपने देशके लिये, अपने देशके गरीब और कङ्गाल भाइयोंके लिये वे प्रत्येक समय सब कुछ करनेके लिये तैयार रहते थे। अधिकारियों द्वारा रचे हुए षड्यंत्रोंके संसारमेंसे हथेलीपर सिर रखकर आगे बढ़ते थे काँटोंके मार्गपर चलते थे, और आवश्यकता पड़नेपर कारागारकी कोठरीमें सात-सात छोटी दावातें निगल जाया करते थे। भोजनकी चिंता नहीं, कपड़ेकी चिन्ता नहीं, और चिंता नहीं अपने अमूल्य जीवनकी। यदि चिंता थी तो, अपने लक्ष्यतक पहुँचनेकी, आगे बढ़नेकी।

३

देशकी स्वाधीनताके प्रबल साधक लेनिन! सचमुच वे स्वाधीनताके साधक थे, सचमुच वे कष्टोंकी वेदिकापर बैठकर मजदूरोंके सुख और कल्याणका महा मंत्र जगा रहे थे, इसी महामंत्रके लिये तो वे अपने देशसे सुदूर साइबेरियामें चले गये, निर्वासित कर दिये गये थे। साइबेरियामें उनका कष्टपूर्ण जीवन! उसके स्मृतिमात्रसे हृदय कम्पित हो उठता है रोंगटे खड़े हो जाते हैं। किन्तु पुरुषार्थका वह सजीव पुतला, अपनी मातृ-भूमिका सच्चा उपासक कष्टोंके उस संसारमें भी हँस-हँस

कर अपने लक्ष्यके गीत गा रहा था। दिन हो या रात, संध्या हो सवेरा, उसे प्रतिक्षण अपने उद्देश्यकी चिन्ता लगी रहती थी। सुदूर साइबेरियामें भी उसकी आँखोंके सामने रूसके करोड़ों ग़रीब और मज़दूर प्रतिक्षण नाचते रहते थे, वह सदैव अपनी हृदयकी आँखोंसे उन्हींको देखा करता था। उसका जीवन, उसका प्राण, उसकी शक्ति, उसका साहस और उसके जीवनके काम, सब कुछ उन्हींके लिये थे, उन्हीं मज़दूर और दरिद्रोंके के लिये थे, जिनके दुःखके गीत उसकी मही माता गा रही थी।

लेनिन उन्नतिकारी थे और थे, रूसके अत्याचार-पूर्ण शासनको उलटनेवाले प्रवल विद्रोही। रूसका शासक और समाज उन्हें अपनी आँखोंका काँटा समझता था। यदि उसकी चलती तो वह लेनिनके अस्तित्वको सर्वनाशकी आगमें झोंक देता। किन्तु लेनिन 'लेनिन' थे, साहस और शक्तिकी सजीव प्रतिमा थे। वे कष्टों, दुःखों और यातनाओंके संसारमें हँसते हुए चले जाते, किन्तु कुचक्रियोंके कुचक्रको तोड़ जाते। कुचक्र-कारी हाथ मलते ही खड़े रह जाते, और वे अपने लक्ष्यके पथपर एक क़दम और आगे निकल जाते। साथी, सहयोगी, उनकी इस भयानक प्रगतिपर आश्चर्य प्रगट करके कहते, "सावधान होकर चलिये, नहीं तो विपत्तिमें फँस जाइयेगा।" अपने साथियोंकी इस बात को सुनकर वे हँस देते, और साथ ही यह कह देते, "यह असम्भव है, मैं कभी भी विपत्तिमें नहीं फँस सकता। मेरी रूसको आवश्यकता है, और मैं उसके लिये

जीवित रहूँगा।"

सचमुच उस महान् साधककी रूसको आवश्यकता थी। सचमुच रूसका विभुक्षित समुदाय उस सफल तपस्वीके कल्याणके लिये अपने हृदयका वरदान लुटा रहा था। इसीलिये तो लेनिन विपत्तियोंकी गोदमें, अधिकारियोंके बीच में, और प्रतिकूल परिस्थितियोंमें भी अपनी गर्दनको ऊँची करके निकल जाते थे। शासक वर्ग उन्हें मिटानेके लिये प्रतिक्षण सावधान रहता, पर उनकी सावधानी, और उनके पुरुषार्थके सन्मुख शासकोंकी सावधानी धूलमें मिल जाती। वे जहाँ जाना होता, निकल जाते, जो कुछ करना होता, कर लेते, और शासकोंका फैला हुआ जाल खालीका खाली ही रह जाता। उनमें अदम्य पौरुष था, अजेय साहस था। वे अपने पौरुष और साहसके सन्मुख आपदाके ऊँचे पर्वतको भी धूल समझते और तिनका!

लेनिनका म्युनिच और लन्दनका वह दुःख-दर्द जीवन! न किसीसे परिचय और न किसीसे सम्बन्ध! लन्दनमें तो वे अंगरेज़ी भाषासे भी अनभिज्ञ थे। पासमें रुपये-पैसेका भी अभाव था। इसके अतिरिक्त सरकारका भय भी सदैव सिरपर नाचता रहता था। किन्तु लेनिन कभी भयभीत न हुए, निराशाने कभी उनके पैरोंको न जकड़ा। वे भूख-प्यास की यंत्रणाको लेकर अपनी छोटी, गन्दी और अंधकार-पूर्ण कोठरीमें आनन्दसे सो जाते। वे बस्तियोंसे दूर समुद्र

के तटपर, और छोटी-छोटी पहाड़ियों पर बैठकर अपने विचारों और अपनी समस्याओंपर विचार किया करते! लन्दनकी गन्दी गलियोंमें जहाँ मज़दूरोंकी बस्तियाँ थीं, वे प्रति दिन विचरण किया करते थे। कई-कई दिन बीत जाते, किन्तु उन्हें अपनी उस छोटी-सी कोठरीसे बाहर निकलनेका अवसर ही न मिलता! संसार और संसारके मानव समाजमें रहते हुए भी वे कई-कई दिनों तक उससे दूर रहते, बहुत दूर, किन्तु संसारसे दूर रहने पर भी रूस और रूसके मज़दूरोंसे दूर न रहते। किसी न किसी प्रकार लन्दनकी उस छोटी-सी कोठरीमें भी उनके पास रूसके मज़दूरोंका समाचार पहुँच ही जाता। वे उस समाचारको सुनकर अपना सब कुछ भूल जाते। और भूल जाते अपने कष्टों और दुःखोंको भी। उनके जीवनमें एक बल आ जाता, और वे उस भयानक परिस्थितिमें भी अपने जीवन-पथपर दूनी प्रगतिके साथ दौड़ लगाते। क्यों न हो? वे मज़दूरोंके प्राण थे न! मज़दूरों ही के लिये तो वे लन्दनकी गन्दी और अपरिचित गलियोंमें भटक रहे थे। उन्हींके लिये तो वे उन छोटी, अँधेरी और गन्दी कोठरियोंमें दुःखकी वेदिकापर बैठकर साधनाका महा मंत्र जगा रहे थे। फिर उन्हें प्रसन्नता क्यों न प्राप्त हो? फिर मज़दूरोंके सुसम्वादको सुनकर उनका पुरुषार्थ क्यों न दूने आवेगके साथ उबल पड़े?

४

वह निर्वासित था। वही संसारका महापुरुष लेनिन,

ग़रीबों और मज़दूरोंकी सदिच्छामें घुट-घुटकर प्राण देनेवाला लेनिन ! लेनिन रूसी समाजकी जीर्ण-शीर्ण श्रृंखलाको तोड़ कर रूसको एक दिव्य लोकमें पहुँचा देना चाहते थे, किन्तु रूसका सम्राट् ज़ार उन्हें समझता था अपना शत्रु। वह रूसका सम्राट् होने पर भी रूसके हितकी कामना करने वाले को सदा उससे दूर फेंके रहता था। कभी कारागारकी कोठरीमें, तो कभी देशकी सीमासे बहुत दूर—विदेशमें। लेनिन अपने जीवनमें कई बार जेल गये, और कई बार निर्वासित हुए। कई बार उन्होंने पैदल चलकर लम्बी-लम्बी यात्रायें भी समाप्त कीं। भयंकर शीतमें, बर्फ़ानी स्थानोंमें भी पागलोंकी भाँति छाती तानकर चलते थे। उनकी ज़बानपर प्रतिक्षण रूसका नाम रहता था, और आँखोंके सामने रहता था, ग़रीबों-मज़दूरोंका चित्र। वे उसी चित्रको देखते हुए भयानक परिस्थितिमें भी हँसते-मुस्कुराते हुए आगे निकल जाते थे। धन्य था वह पुरुषार्थी तपस्वी ! मानव समाज प्रलय काल तक उसका ऋणी रहेगा। महा ऋणी !!

लेनिनमें पुरुषार्थकी अखण्ड ज्योति थी, अटूट प्रकाश था। वे अपने उस प्रकाशको लेकर निर्वासन कालमें विदेशोंमें निर्भयता पूर्वक परिभ्रमण किया करते थे। न रहनेकी सुविधा, न खाने-पीनेकी सुविधा और न सोने-विश्राम करनेकी सुविधा ! चारों ओर अभाव ही अभाव था। लेनिन उसी अभावकी गोदमें बैठकर दिन-रात काम करते थे। ज़मीनपर सोते थे, मेज़-कुर्सी

के अभावमें भी रात-रात भर जागकर लिखने-पढ़नेका काम करते थे और कभी-कभी अपने हाथसे छापनेकी मशीन भी चला लिया करते थे। किन्तु फिर भी रहते थे प्रसन्न, अत्यन्त प्रसन्न ! लेनिनके साथियोंने कभी लेनिनकी आवृत्तिपर निराशा देखी ही नहीं ! कठिनसे-कठिन परिस्थितिमें भी उनको आवृत्तिपर साहस और शक्तिकी ज्योति दृष्टिगोचर होती थी। ऐसी ज्योति दृष्टिगोचर होती थी, कि उसे देखने वाले पुरुषार्थसे भर जाते, साहस और शक्तिका राग अलापने लगते !

उन दिनों लेनिन भी निर्वासित थे। उन्हीं दिनों, जिन दिनों संसारमें महासमर हो रहा था, रूसमें राज्य क्रान्ति ! लेनिन रूसके ग़रीबों-मजदूरोंमें जीवन-जागृतिकी ज्योति दौड़ाकर स्विटज़रलैंडमें पड़े हुए थे। उधर ज़ारका अत्याचार बढ़ रहा था, और इधर बढ़ रहा था मज़दूरोंका असन्तोष ! आख़िर ज्वाला भड़क उठी। सारा रूस क्रांतिकी प्रलयकारी आवाज़ोंसे विकम्पित हो उठा। स्विटज़रलैंडमें बैठे हुए क्रांति के पुजारी लेनिनके कानोंमें भी महाक्रांतिकी आवाज़ पड़ी। और वे भी चल पड़े रूसकी ओर। पग-पगपर विपत्तियाँ थीं, कठिनाइयाँ थीं ! निर्वासनका भयंकर दण्ड लेनिनके सिरके ऊपर नाच रहा था। किन्तु फिर भी वे अपने प्राणोंकी ममता त्यागकर रूसकी ओर दौड़ पड़े !

क्रांतिके पुजारी लेनिनको इसी महाक्रांतिकी तो प्रतीक्षा

थी! इसी महाक्रांतिकी सृष्टिके लिये तो वे विदेशोंमें भिखारियोंकी भाँति घूम रहे थे! फिर वे अपने प्राणोंकी ममताको हृदयमें सिमेटकर कैसे विदेशमें रह सकते थे। रूस महाक्रांतिके द्वारा उनका आवाह्न कर रहा था! रूसकी मही-माता उपयुक्त अवसरपर अपने निर्वासित पुत्रका नाम ले-लेकर उसे रूसमें बुला रही थी। लेनिन उसी पुकारको सुनकर तो रूसकी ओर चल पड़े! किन्तु रूस पहुँच जाना तो साधारण बात थी नहीं। मार्गमें पड़ने वाले स्वेडिन, और जर्मनी इत्यादि राष्ट्र अपनी सीमासे क्यों लेनिनको रूस जानेकी आज्ञा देने लगे? लेनिनके मित्रों और सहयोगियोंमें इसी बातपर विचार होने लगा—तर्क चलने लगे। किसीने लेनिनको सलाह दी कि यात्रामें बहरे बन जाओ, और किसीने कहा गूँगे! किन्तु लेनिनने कहा, "सभी बातोंसे कुछ भी नहीं हो सकता। तनिक सन्देह हुआ नहीं कि मैं बन्दी बना लिया जाऊँगा, फिर रूस मेरे लिये स्वप्न हो जायगा।"

अंतमें लेनिनने स्वयं अपनी यात्राके लिये एक उपाय स्थिर किया। लेनिन अपने कुछ मित्रोंकी सम्पत्ति और सहायतासे एक मुहर लगी बंद गाड़ीमें बैठ गये, और यात्राके लिये निकल पड़े। जीवनकी चिंता नहीं, प्राणोंका मोह नहीं! भोजन न मिले, सांस लेनेके लिये उपयुक्त स्थानकी आवश्यकता नहीं। यदि कुछ चाहिये, यदि किसी वस्तुकी आवश्यकता है, तो केवल रूसमें पहुँच जानेकी, रूसमें पहुँचकर उठी हुई क्रांतिको सबल बनाने

की ! फिर किसमें शक्ति थी, जो ऐसे महात्यागीकी प्रगति को रोक सकता ? जो ऐसे देश-प्रेमीके उठे हुये पैरोंको पीछेकी ओर मोड़ सकता ? जो संसारके नौ करोड़ मनुष्योंके हितोंके लिये प्रतिक्षण मृत्युका आलिंगन करता है, उसे कौन मार सकता है ? किसमें शक्ति है, जो उसकी प्रगत्तिका अवरोध कर सकता है ? लेनिन रूस पहुँच गये, और पहुँच गये महाक्रांतिकी गोदमें । क्राति और क्रांतिके पुजारियोंने उनका स्वागत किया। उन्हें अपने हृदयमें बैठाया । क्यों न हो, वे उनके महापुरुषार्थी नेता थे न !

५

क्रांतिकी आग जल चुकी थी। ज़ार अपने अत्याचारोंसे, अपनी अमानुषिक लीलाओंसे उसे आहुति दान कर रहा था। ग़रीबों और मजदूरोंकी आंखोंको अपने प्राणोंके टुकड़ोंसे पोछने वाले रूसी नवजवान दौड़-दौड़कर उस अग्निमें कूद रहे थे, और बढ़ा रहे थे, उसकी ज्वालाको, उसकी लाल-लाल लपटोंको । किन्तु अभी क्रांतिकी कात्यायिनी देवीकी प्यास शान्त न हुई थी, अभी उसे और अधिक रक्तकी आवश्यकता थी और आवश्यकता थी, बलिदानोंकी। इसीलिये उठी हुई क्रांति दब गई। ज़ारने अपनी शक्तिसे उसे अपने पंजेमें कर लिया। बहुत से लोग पकड़े गये, और बहुत से लोग फांसी की तख्तियोंपर चढ़ा दिये गये ! लेनिनके नाम भी गिरफ्तारी का वारण्ट था। किन्तु लेनिन बच गये। अपने एक साथीके

साथ मिलकर एक गाँवमें निकल गये। अधिकारी उन्हें खोजते ही रह गये, पर वे हाथ न आये, और दो सहस्र रूवल के पुरस्कारकी घोषणा करने पर भी! ईश्वर ही उनका रक्षक था, उनके जीवनका त्राता था। रूसमें फाँसियों और निर्वासनका बाज़ार गर्म था! लेनिनके पीछे चलने वाले क्रांतिकी आवाज़ लगानेपर शूलियोंपर चढ़ रहे थे, और लेनिन क्रांति के जन्म-दाता होनेपर भी साफ़-साफ़ बच रहे थे। क्यों न हो? उनकी रूसके ग़रीबों और मज़दूरोंको आवश्यकता थी न! यदि लेनिन भी अपने अन्यान्य सहयोगियोंकी भाँति फाँसी पर चढ़ गये होते तो फिर रूसके अर्दित और पीड़ित मानव समाजकी रक्षा कौन करता, उन्हें मानवी अधिकारोंके सुनहले संसारमें कौन पहुँचाता !!

रूसमें क्रांतिकी लपट समाप्त हो चुकी थी। केवल चारों ओर धुँआ ही धुँआ सुलग रहा था, और लेनिन अपने साथी के साथ किसानोंके एक गाँवमें दिन बिता रहे थे। वहाँ वे किसानोंके साथ खेत जोतते, खेत काटते और सिरपर गट्ठर लादकर खलिहानमें पहुँचाते थे। उन्हें कोई जानता ही न था, कि ये लेनिन हैं, और रूसी क्रांतिके जन्मदाता! गिरफ्तारी का वारण्ट और ऊपर से दो सहस्र रूबलकी घोषणा! फिर कोई जान कैसे सकता था? उनके भेदको कोई भाँप कैसे सकता था? अभी रूसकी आवश्यकतायें पूरी नहीं हुई थीं। इसीलिये उनकी उसे आवश्यकता थी, और वे विपत्तियों-बाधाओंका

पर्वत सिरपर लादकर स्थान-स्थानमें विचरणकर रहे थे। किन्तु वे आकुल थे, बेचैन थे। अपने लिये नहीं, अपने रूसके लिये, रूसके ग़रीबों और मजदूरोंके लिये। उसके अन्तरतममें सुलगने वाली अग्निमें वे फिर जोरकी फूँक मारना चाहते थे और मारना चाहते थे ऐसी फूँक, कि इस बार उससे जो ज्वाला निकले उसे कोई शांत न कर सके, कोई न बुझा सके।

पर किसानोंके उस गाँवमें रहकर यह काम कैसे हो सकता था? लेनिन अपने हृदयकी व्याकुलताको लेकर जाड़के दिनोंमें फिनलैंड चले गये। फिनलैंड जानेके लिये लेनिनको अपनी दाढ़ी-मूँछ और सिरके बाल कटवा लेने पड़े थे। दाढ़ी-मूँछके स्थानपर उन्होंने नकली दाढ़ी-मूँछ लगा लिया था। लेनिन जबतक फिनलैंडमे रहे, बराबर भयंकर से भयंकर आपदायें उठाते रहे। पग-पगपर काँटोंका जाल बिछा हुआ था। स्थान-स्थानपर उनके लिये भय और आशंका थी। किन्तु वे बराबर आगे बढ़ते जा रहे थे, शेरकी तरह बढ़ते जा रहे थे, विपत्तियोंके सघन दलको चीरकर। लेनिन की उस बढ़ती हुई आवेगमयी प्रगतिको देखकर उनके साथी आश्चर्य प्रगट करते थे, महाआश्चर्य! एकने बिलकुल ठीक ही लिखा है कि लेनिनकी उन दिनोंकी कार्य-प्रगति निराशा और शिथिलता-प्राप्त मनुष्योंकी रगोंमें भी गरम रक्तका संचार करती थी।

कुछ दिनों तक फिनलैंडमें रहनेके पश्चात् लेनिन पीटर्स-

वर्ग चले गये। और उसी स्थानसे महाक्रान्तिकी ज्वाला में फूंक मारने लगे। लेनिनकी साधना सफल हुई। उनकी तपस्यामें बल आया, और उसके साथ ही चारों ओर छाये हुये धुंएकी गोद से क्रांतिकी लाल-लाल लपटें उठने लगीं। ऐसी लपटें उठने लगीं, कि उन्हें देखकर ज़ार और ज़ारके शासनाधिकारी कम्पित हो उठे। जीर्ण-शीर्ण राजसत्ता लड़खड़ाकर गिर पड़ी और चारों ओर मज़दूर राज्यका डंका बजने लगा। किन्तु वह अनिश्चित काल था, असंयमित परिस्थिति थी। महाक्रांतिने सबको अस्त-व्यस्तकर दिया था, सबको तोड़-मोड़ दिया था। कोई कह नहीं सकता था कि अब क्या होगा ? जर्मनी अलग उजड़े हुऐ रूसको निगल जानेके लिये मुँह फैलाये हुए था। रूसमें ही बहुत से ऐसे सहस्रों मनुष्य थे, जो लेनिनको सर्वनाशकी आगमें झोंक देना चाहते थे। लेनिनके पास न धन था, न सेना थी! सेना और धनके नामपर उनके पास थे, उनकी आज्ञाओंपर मर मिटने वाले उनके साथी! साथियोंकी शक्तिसे भी अधिक उनका सहचर था, उनका पुरुषार्थ! वे उसीकी शक्तिसे आगे बढ़ रहे थे। रूस ऐसे विशाल राष्ट्रके असंयित शासनको एक पथपर चलानेका प्रयत्न कर रहे थे। सहस्रों विरोधों, बाधाओं और विपत्तियोंके होते हुए भी लेनिनने रूसको एक ऐसे स्थानपर पहुँचा दिया, जहाँ पहुँचकर रूस संसारके लिये आदर्शनीय हो गया। रूसको आदर्शनीय बनानेके लिये लेनिनने अपना

सब कुछ त्याग दिया। सुख, वैभव, सम्पत्ति, सब कुछ। उन्होंने कितने कष्ट झेले, कितनी आपदायें सहीं। पर उन्होंने अपने पुरुषार्थसे रूसको सुनहले संसारमें पहुँचा दिया, उसे जगत्‌में धन्य बना दिया। आज रूस गौरववान है, आदर्शनीय है। वह अपने गौरववान और आदर्शनीय संसारमे प्रति दिन लेनिनकी पूजा करता है। नवीन रूसकी एक-एक वस्तु लेनिन का गुणानुवाद करती है, और करती है उनके पुरुषार्थ और शक्तिकी। लेनिनने अपनी साधना और तपस्यासे रूसमें जिस सजीवताका संचार कर दिया था, वह आज रूसके प्रत्येक बच्चेमें मूर्तिवान-सी दृष्टिगोचर हो रही है। धन्य थे, लेनिन और धन्य था, लेनिनका महापुरुषार्थ !

लेनिन पुरुषार्थी थे, जीवन-जागृतिके सच्चे पूत थे। उन्होंने संसारमें वह कर दिखाया जिसे आजतक संसारमें कोई न कर सका! फटे-पुराने कपड़ोंसे लदे रहने वाले एक ठिगने कदके व्यक्तिने ज़ारके सिंहासनको उलट दिया। उसे सदाके लिये सर्व-नाशकी धूलिमे मिला दिया। किसे विश्वास था, उन दिनों, जब लेनिन फटे-पुराने कपड़े पहनकर लोगोंसे क्रांतिकी चर्चा करते थे। लेनिनकी बातोंको, उनके विचारोंको लोग स्वप्न कल्पना समझते, और समझते एक पागलका प्रलाप! किन्तु लेनिनके लिये जसे वह चिर सत्य-सा था, जैसे वह अदृश्य अदृष्टमें रूसके भावी जीवनकी ज्योति देख रहे हों ! वे विरोधी और विपत्तियोंकी उपेक्षा करके बराबर आगे बढ़ते गये।

उस प्रगतिमें शक्ति थी, और थी प्रचण्ड आंधीकी सदृश। उन्हों ने कभी इसकी चिन्ता न की, कि कौन उनका सहायक है, और कौन नहीं! वे मित्रों और सहयोगियोंके अभावमें भी बराबर आगे बढ़ते गये। उन्हें केवल अपनेपनपर भरोसा रहता था, और भरोसा रहता था, अपने पुरुषार्थपर। वे उसीको लेकर अकेले भयानकसे भयानक कार्य-क्षेत्रमें कूद पड़ते थे, और सफलताके साथ निकल जाते थे आगे। असफलता और निराशाको उनके जीवनमें स्थान ही नहीं था। जिसे लोग 'असफलता' और 'निराशा' कहते उसीमें वे सफलता और और आशाका दर्शन करते थे।

लेनिनके अनेक मित्र भी उनके विरोधी थे। विरोधी ही नहीं थे बल्कि, वे उनका उपहास भी करते थे, और उन्हें देखते थे अत्यन्त घृणाकी दृष्टिसे। वे कहते, 'लेनिन पागल है मूर्ख है, अज्ञान है। उसे किसी न किसी दिन अपनी अज्ञानता ही के कारण जंगलोंमें भटकना पड़ेगा, मार्गोंकी धूल फांकनी पड़ेगी।' इतना ही नहीं, बहुतसे लोग लेनिनके जानी दुश्मन भी थे। वे प्रत्येक समय इस बातकी चेष्टामें रहते थे, कि अवसर मिले, और उसे सदा-सर्वदा के लिये मृत्युकी गोदमें सुला दें। किन्तु लेनिन कभी भी भयभीत न हुए। वे अपने विरोधियों और शत्रुओंके मध्यमे भी निर्भयता पूर्वक कूद पड़ते थे। उन्होंने कभी पराजय स्वीकार की ही नहीं। उनका पुरुषार्थ, उनकी शक्ति, और उनका अदम्य साहस उन्हें सदा विजयी बनाये

रहा, विजेता घोषित किये रहा !

६

लेनिन पुरुषार्थी थे, साहसी थे, और थे ग़रीबों-मजदूरोंमें अपनेको मिला देनेवाले। वे जब ग़रीबों-मज़दूरोंसे बात करने लगते तब उनके हृदयमें भी कोई दुबला-पतला और सूखी-सूखी हड्डियोंवाला मज़दूर ही होता ! वे बड़े प्रेमसे, बड़ी सरलतासे बूढ़े किसानोंसे बात किया करते थे। उनकी बातचीतका ढंग बड़ा ही अनूठा था, बड़ा ही मोहक था। जिससे वे बात करते, अपनी बातोंके साथ ही साथ स्वयं भी उसके हृदयमे उतर जाते थे। उनकी बातोंमें सच्चाई होती, और होती, त्यागकी एक बहुत बड़ी शक्ति। अपने उसी गुणसे तो वे लोगोंको विमुग्ध कर लिया करते थे। जीवनमें न अभिमान था, और न उच्चता का अहम भाव। कृत्रिमतासे दूर रहते, और विलासिताको देखते थे, घृणाकी दृष्टिसे। प्रारम्भसे लेकर अन्त तक मज़दूरोंकी भाँति रहे, और उन्हींकी भाँति परिश्रमकी अग्निमे अपने शरीरको जलाते रहे। उन्होंने कभी अपने शरीरको सुख और सुविधा दी ही नहीं। वे दूसरोंके लिये जगत्मे पैदा हुए थे, फिर अपने शरीरको सुख और सुविधा कैसे प्रदान कर सकते थे ?

लेनिन अपने सुखकी बिलकुल चिन्ता न करते। उनके मनकी समस्त चिन्ता ग़रीबों और मजदूरोंके लिये थी। वे अपनी इच्छाओं और अपनी अभिलाषाओंको उन्हीं तक केन्द्रित रखते थे। वे स्वयं न खाते, पर ग़रीब मज़दूरको अवश्य

खाना खिला देते थे। वे बर्फानी रातमें बिना वस्त्रके रह जाते, किन्तु मज़दूरको तन ढाँकनेके लिये कपड़ा अवश्य दे दिया करते थे। वे धूप-शीतकी चिन्ता न करके वृक्षकी छायामें सो जाते, किन्तु मज़दूरके रहनेके लिये एक छोटी-सी झोपड़ी अवश्य बनवा दिया करते थे। उनकी दृष्टिमें ग़रीब और मज़दूर ही उनके सर्वस्व थे। वे इन्हींके उद्धारके लिये जगत्में पैदा हुए थे और इन्हींकी सेवा करते-करते संसारसे विदा भी हो गये। दूसरे मानीमें वे ग़रीबों और मज़दूरोंके मसीहा थे। संसारके ग़रीब और मज़दूर आज भी अपने इस मसीहाका गुणानुवाद करते हैं, और कदाचित् प्रलय काल तक करते रहेंगे!

मुस्तफा कमालपाशा

१

सालोनिकाके एक गंदे मुहल्लेमें एक टूटा-फूटा घर। उसमें न प्रकाशके लिये मार्ग और न वायुके लिये पथ! दिनमें ही अंधकार गन्दगीके साथ अठखेलियां करता रहता। किंतु उस चीथड़ोंकी रानीको जैसे इसकी कुछ चिंता ही नहीं। वह बड़ी प्रसन्नताके साथ अँधकारकी गोदमें निवास करती। दीनता-दरिद्रता, दोनोंका उसके जीवन-रंग मंचपर अभिनय हो रहा था, किंतु वह अपने दरिद्र स्वामीके साथ अबाध गतिसे जीवन-मार्गपर चली जा रही थी।

वह थी जुबेदा—मुस्तफा कमालकी मां, कठोर और चिड़चिड़े स्वभावकी स्त्री, पर्दा ही उसका जीवन था। अपने स्वामी अलीरजाके अतिरिक्त संसारकी और किसी

वस्तुको जानती ही न थी। घरमें अंधकार, बाहर जब निकलती, तब मुँह ढँका हुआ, प्रकाशका दर्शन भली भाँति कदाचित् ही कभी कर पाती रही हो।

किंतु नहीं, एक दिन उसने प्रकाशका दर्शन किया। खूब जी भरके किया। नन्हा-सा, दुबला-पतला, और नीली-नीली आँखोंवाला मुस्तफा जब उसकी गोदमें पैदा हुआ, तब उसकी आँखोंने ही नहीं, उसके हृदयने भी प्रकाशका दर्शन किया। उसके शरीरका रोम-रोम पुलकित हो उठा, और आलोकित हो उठा, उसके हृदयका कोना-कोना। वह उस दरिद्रताके साम्राज्यमें भी अपने जीवनको धन्य समझने लगी, महाधन्य!

मुस्तफाके अतिरिक्त उसकी एक और भी सन्तान थी—एक लड़की। पर ज़ुबेदा अपने प्राणोंका प्यार मुस्तफा ही पर लुटाया करती थी। मुस्तफा भी कैसा विचित्र बालक! था तो दुबला-पतला, सूखी-सूखी हड्डियोंवाला; किन्तु संसार और भाग्यसे होड़-सा लगाये हुये था। भाग्यने बचपनमें ही उसके पिता अली-रज़ाको छीनकर उसे जीवनके मरुस्थलमें पटक दिया। किन्तु फिर भी वह संसारके गर्वको स्वीकार न करता। संसारकी कौन कहे, अपनी विधवा माँ ज़ुबेदाकी तो वह सुनता ही न था। बात-बातमें शोख़ी, बात-बातमें शरारत। अपने दीन बचपनके सामने किसीको कुछ समझता ही न था। ज़ुबेदा जब कुछ बोलती, तब सिंहकी भाँति गरजकर उसपर चढ़ बैठता था। वह अपने हीमें रहता था, और अपने तक रहना चाहता था।

न किसीके प्राणोंकी ममतासे मतलब और न किसीकी मित्रताकी चाह। प्यार नामकी प्रकृतिने उसे कोई वस्तु ही न दी थी। फिर वह ममताको क्या जाने, उसके रहस्यको क्या पहचाने?

किन्तु जुवेदा उसपर मरती थी—एक नहीं, सौ सौ प्राणोंसे। माके हृदयकी ममता! आदर-और सत्कारके अभावमें भी उसका स्रोत छलछलाकर वह उठता था। जब अलीरजाकी मृत्यु हो गई, तब वह अनाथ हो गई, निराश्रिता। सामने जीवनका अथाह समुद्र, और समुद्रकी भीषण तरंगोंकी गोदमें खेलती हुई एक छोटीसी नौका! किन्तु उस नौकाको खेवनेवाला कोई नहीं। जुवेदा-विधवा जुवेदा आकुल हो उठी, और अपने दोनों अनाथ बच्चोंको लेकर एक गांवमें अपने भाईके यहाँ चली गयी।

मुस्तफा, टर्कीका प्राण स्वर्गीय मुस्तफा, अपने मामाके घर गाय-बैलोंको चरा देता, और कौये उड़ाता था। वह अधिकतर मैदानमें अकेले ही रहता था। किसीके साथ उसे कभी किसीने देखा ही नहीं। किन्तु वह अपने जीवनसे असन्तुष्ट था। रह-रहकर क्रुद्ध सर्पकी भांति फुफ्कार उठता, पर विवश, साधन-हीन अपनी स्वतन्त्र उमंगोंको हृदयमें ही दबाकर बैठ जाता।

जुवेदा उसकी मां, भी उसके इस जीवनसे असंतुष्ट थी। मुस्तफा जहाँ था, वह उसे वहीं नहीं रहने देना चाहती थी। वह चाहती थी, मुस्तफा जीवनके क्षेत्रमें आगे बढ़े और हो कोई बहुत बड़ा मुल्ला। उसने अपनी बहनसे कह-सुनके मुस्तफाको एक स्कूल-में भेजना प्रारम्भ कर दिया। किंतु प्रकृतिकी गोदमें विचरनेवाला

स्वच्छन्द स्वभावका मुस्तफा। स्कूलका संयमशील जीवन उसे पग-पगपर असह्य होने लगा। कभी किसीसे लड़ जाता, और कभी किसीके ऊपर टूट पड़ता। एक दिन उसे इसीके लिये मास्टरकी ओरसे दण्ड मिला। भला मुस्तफा किसीके दण्डके सामने कव अपना मस्तक झुकाता? उसने मास्टरके दण्डका शक्ति भर विरोध करके स्कूल जाना ही छोड़ दिया।

जुवेदा परीशान, हैरान, वह अब क्या करे? मुस्तफाको जीवनके किस मार्गपर ले चले? किन्तु मुस्तफाको जैसे इसकी कुछ चिंता ही नहीं, जैसे वह अपना भविष्य अपनी आँखोंसे देख रहा हो। माँ आकुल थी, वेचैन थी, पर वह प्रसन्न था। उसे किसी बातकी कुछ चिन्ता ही नहीं थी। अन्तमें वह एक मनुष्यकी सलाहसे फौजी स्कूलमें भरती हो गया। फौजी स्कूलमें उद्दण्ड प्रकृतिके लड़के! मुस्तफा तुरन्त उनमें मिल गया, और हो गया, उनका नेता। जुवेदाको यह अच्छा न लगता था, कि मुस्तफा फौजी स्कूलमें पढ़कर सिपाही वने, पर मुस्तफाके स्वतन्त्र मनको यह जीवन वहुत ही प्रिय था। इसलिये उसने किसीकी चिन्ता न की। वह फौजी स्कूलमें पढ़ता गया, और पढ़ता गया, वड़ी संलग्नतासे। उसने वहाँ खूव उन्नति की। इतनी उन्नति की, कि वह मुस्तफासे मुस्तफा कमाल हो गया।

एक दिन था, वह निराश्रित विधवाका आश्रय-हीन लड़का किन्तु अव हो गया, वह एक योग्य सैनिक! ऐसा योग्य सैनिक, कि टर्कीके वड़े-वड़े अधिकारियोंकी दृष्टितक उसकी ओर आक-

षित हो गई। लोग उसे चाहने लगे, उसका सम्मान करने लगे, किन्तु उसे किसीकी 'चाह' और किसीके सम्मानकी चिंता न थी। वह दर्पसे परिस्थितियोंसे युद्ध करता हुआ आगे बढ़ा जा रहा था। कभी आशा, कभी निराशा! परन्तु प्रचण्ड आंधीकी भांति उड़नेवाला उसका मन! वह दोनोंको एक समान समझता। जीवन-मार्गमें आशाके कुसुम हों, या निराशाके पर्वत, पर वह दोनोंको कुचलता हुआ अपने किसी निर्दिष्ट स्थानके लिये आगे बढ़ा जा रहा था। उसका साथी, महासाथी, पुरुषार्थ, उसे जीवनकी किसी सुनहली दिशाकी ओर बरबस खींचे लिये जा रहा था। उसे अपने इस अनन्य सहचरनी शक्तिपर गर्व था, महागर्व! वह उसीकी शक्तिमें फूला हुआ, पर्वतको धूल समझता, तिनका।

२

टर्कीका वह तुर्क, उसकी रग-रगमें जातिका अभिमान था, देशका गौरव था। वह अभिमान और गौरवकी मस्ती में झूमता हुआ जीवनके मार्गपर आगे बढ़ा चला जा रहा था। वह अपने देश गौरवके सामने सबकी उपेक्षा करता। अपनों और परायोंकी भी। संबल नहीं, साधन नहीं, किन्तु बनना चाहता सबका नेता, रहना चाहता सबके आगे। इसी लिये अपने साथियोंको आंखोंका कांटा बना हुआ था। लोग विद्रोही समझते, प्रलापी, उसकी सच्ची बात भी प्रलाप समझकर वायुमें उड़ा दी जाती। बात बातमे, स्थान-स्थान पर उसके

दर्पको चूर्ण करनेका प्रयास किया जाता, उसका दर्प चूर्ण न होता। जैसे उसे अपने दर्प पर बिश्वास हो, अपनी बातोंमें सत्यका कोई आभास मिल रहा हो।

वह था मुस्तफा। वही मुस्तफा, जो जुबेदाकी गोदमें अन्धकार-पूर्ण कोठरीमें पैदा हुआ था, और जिसकी माँ सहायताके लिये संसारके संमुख अंचल पसारे हुये थी। पर अब वह मुस्तफा न था। अब था वह बड़े-बड़े अधिकारियोंसे होड़ लेने वाला मुस्तफा कमाल! सबकी आलोचना करता, एक एककी बुराइयां निकालता। किसीको देश-द्रोही कहता, और कहता किसीको अँगरेजों और जर्मनियोंका चाटुकार गुलाम। इसीसे लोग उसे बुरा मानते, उसे घृणा और उपेक्षाकी दृष्टिसे देखते।

यूरोपीय महासमरकी चिनगारी छिटक चुकी थी। जर्मनी इंग्लैण्ड, इत्यादि देशोंके सैनिक अपने अपने देशकी सीमा-विस्तारके लिये प्राणोंकी बलि चढ़ा रहे थे। पर मुस्तफा सोफियामें पड़ा हुआ अपने भाग्यके साथ अभिनय कर रहा था। जर्मनी धीरे धीरे उसके टर्कीको अपना ग्रास बना रहा था। वह जर्मनीकी गतिको भलीभाँति परख रहा था। इसी लिये कभी कभी क्रुद्ध सर्पकी भांति फुफकार उठता। फुफकार उठता अपने टर्कीकी स्वतंत्रताके लिये, उसके जन्म-सिद्ध अधिकारोंके लिये। वह टर्कीमें तुर्कोंको छोड़कर और किसीको देखना ही नहीं चाहता था। वह कहता था, टर्की तुर्कोंके लिये है,

और तुर्क टर्कीके लिये, पर उसकी कोई सुनता ही नहीं था। लोग उसे प्रतापी समझते अहमन्य! वह अपने साथियोंकी उपेक्षाके कर्कश घूटको पीकर सोफियामें पड़ा हुआ था।

पर युद्धने उसे वेचैन कर दिया। टर्की जर्मनीकी ओरसे लड़ रहा था। युद्धके समाचारोंने उसकी रग-रगमें एक विजली सी दौड़ा दी। प्राणोंमे तूफान, हृदयके कोने-कोने में साहस-शक्तिका उन्माद। अपने देशकी स्वतन्त्रताके लिये वह युद्ध-भूमिमें जानेके लिये विचलित हो उठा। उसने अधिकारियोंको तार पर तार दिये, कि उसे युद्ध-भूमिमें जानेकी आज्ञा दी जाये। किन्तु लोग उससे डरते थे। सोचते थे, कहीं यह साहस और शक्तिका सजीव पुतला तुर्क सवको दवाकर स्वयं टर्कीका स्वत्वाधिकारी न वन जाय।

अन्तमें बड़ प्रयत्नोंके पश्चात् उस आज्ञा मिल गई। वह बड़ा प्रसन्न हुआ। वह अपने प्राणोंमे उन्माद भरकर चल पड़ा युद्धभूमिकी ओर। किन्तु युद्ध-भूमिमें भी उसकी उपेक्षा की गई। उसे अपमानके चक्रमें पीसा गया। जर्मन सैनिक सैण्डर्सने उसे एक छोटी सी सेना देकर चनाम वायरकी पहाड़ी पर भेज दिया।

किन्तु मुस्तफा कमालके भाग्य! वह जो चाहता था, वही उसे प्राप्त हो गया। वह चाहता था अपनी जन्म भूमिके लिये सिपाहीकी भांति युद्ध करना, उसकी सेवामें जीवनके एक-एक मिनटको लगाना। उसे अवसर मिल गया। वह जिस

पहाड़ी पर तैनात किया गया था, उसी ओरसे सहसा अङ्गरेजों ने आक्रमण कर दिया। किसीको खबर नहीं, किसीको कुछ पता नहीं। किन्तु मुस्तफा बेखबर न था। उसके पास थी केवल एक छोटी सी सेना। वह उसी सेनाको लेकर अपने प्यारे टर्कीके उद्धार, उद्धारके लिये समरमें कूद पड़ा।

भीषण गर्मी पड़ रही थी। पानीके अभावमें सिपाही तड़प-तड़प कर मर रहे थे। तरह-तरहके रक्त चूसने वाले कीड़े प्राणोंमें आकुलता उत्पन्न कर रहे थे। रोगोंका प्रकोप चारों ओरसे मुंह फैलाकर दौड़ रहा था। पर आजादीके दीवाने मुस्तफाको इन विपत्तियोंकी बिलकुल चिन्ता ही नहीं। वह समरांगणमें आंधीकी भांति दौड़-दौड़ कर सिपाहियोंकी रगोंमें जोश उत्पन्न कर रहा था। वह गोलियोंकी बौछारमें, तोपोंके अग्नि-उद्गारमें निर्दयताके साथ सिपाहियोंको धकेल देता, और स्वयं उनके आगे जा पहुंचता। गोलियां सनसनाती हुई आतीं और मुस्तफाकी बग़लसे निकल जातीं। चारों ओर गोलियोंकी बौछार, बीचमें मुस्तफा कमाल। जैसे उसे अपने शरीरकी कुछ परवाह न हो, जैसे वह अपनेको किसी अदृश्य शक्तिके भरोसे छोड़कर निश्चिन्तताके साथ कर्त्तव्य देवताके चरणोंपर श्रद्धांजलि चढ़ा रहा हो।

मुस्तफा, बहादुर मुस्तफा, अपनी रक्षाके लिये प्रयत्न न करता, किन्तु फिरभी रक्षा हो जाती। गोलियां बरसती रहतीं और वह निर्भयताके साथ समरांगणमें विचरता रहता।

एक बार उसके चारों ओर कई बम फटे, किन्तु उसका बाल भी बांका न हुआ, वह तनिक भी बिचलित न हुआ। एक दूसरी बार वह एक खाईके बाहर बाहर बैठा हुआ था। शत्रुओंकी सेना ठीक उसी ओर गोलियां बरसा रही थीं। गोलियां और गोले प्रत्येक बार उसके पास ही आकर दानोंकी भांति बिखर रहे थे। पर दृढ़ चित्त मुस्तफा बड़ी संलग्नतासे अपने काममें लगा था। उसके साथी अफसरोंने उसे बहुत समझाया कि वह रक्षा-कवच धारण कर ले। किन्तु उसने अस्वीकार कर दिया। उसने कहा, इस समय अपने प्राणोंकी रक्षाके लिये प्रयत्न करना सिपाहियोंके सामने बुरा प्रमाण रखना होगा।

गोले गिर रहे थे। गोलियां बरस रही थीं। पर मुस्तफा निश्चिन्तताके साथ अफ़सरोंसे बातें करता हुआ सिगरेट पी रहा था। उसकी निर्भयता, उसकी ओजस्विता और उसकी साहसिकता सिपाहियोंमें बिजलीकी शक्ति बन कर दौड़ रही थी। उसी बिजलीकी शक्तिसे सिपाहियोंने मैदान मार लिया, और मुस्तफाके सजीव पुरुषार्थकी चारों ओर पूजा होने लगी।

३

युद्ध-भूमिका एक मोर्चा। टर्कीके सैनिक-सामन्त थक गये थे। उनकी रग-रगमें उदासी, प्राणोंके कोने कोनेमें निराशा। अङ्गरेजोंकी गरजती हुई तोपें रह-रह कर शेष साहसका दम तोड़ रही थी, सेनाका अधिपति आकुल हो उठा। इधर टर्कीके

सैनिकोंमें निराशा, और उधर आकाशको प्रकम्पित करनेवाली अङ्गरेजोंकी तोपें। सेनाके अधिपतिने टेलीफोनके यंत्रको उठाया और एक नम्बरपर अपनी उँगुलियां दौड़ाकर कहा, कौन मुस्तफा ?

हाँ मैं ही हूं, मुस्तफा कमाल- उत्तर मिला।

मेरे मोर्चेका बड़ा बुरा हाल है-सेना अधिपतिने कहा-सैनिक सामन्त थक गये हैं। प्रत्येकके प्राण निराशाकी गोदमें लोट रहे हैं। उधर अंगरेजोंकी सेना प्रचण्ड आंधीकी भांति दौड़ती चली आ रही है।

आकुल न हो-मुस्तफा कमालने उत्तर दिया-साहस और शक्तिसे काम लो। किसी प्रकार प्राणोंकी बाजी लगाकर चौबीस घंटे तक शत्रुकी गतिको रोके रहो, मैं सब ठीककर लूँगा

मुस्तफाके एक एक शब्दमें बिजली, एक-एक शब्दमें साहस और पुरुषार्थ। सेना—अधिपतिका मन शक्तिकी प्रचण्ड ज्योतिसे खिल खिलाकर हँस पड़ा। वह अपने थके सिपाहियोंमें एक नवीन जीवन डालकर डट पड़ा मैदानमें। दूसरे दिन मुस्तफा भी अपनी टुकड़ीको लेकर वहां जा पहुँचा। फिर क्या ? फिर तो सिपाहियोंकी रगोंमें साहस और शक्तिका अभिनय होने लगा। मुस्तफ़ाने परिश्रान्त सिपाहियोंको जोश की ऐसी शराब पिलाई, कि सब झूमे उठे शक्तिसे बदहोश हो उठे !!

मुस्तफाने मोर्चेबन्दीका ठीक ठीक प्रबन्ध कर सिपा-हियोंसे कहा, मेरे बच्चो शीघ्रता न करना। शीघ्रता करनेसे कार्य नष्ट हो जाता है। हम सब लोग ठीक अवसरकी प्रतीक्षा करेंगे, और फिर बाहर निकल पड़ेंगे। तुम लोग बराबर मेरी ओर देखते रहना, कि मैं कब हाथ उठाता हूं। मेरा हाथ उठते ही तुम सब लोग अपनी बन्दूकें सीधी करके मेरे पीछे-पीछे चल पड़ना।

रातके तीन बज रहे थे। मुस्तफा खाईमें अपने सैनिकोंके साथ बैठकर उचित अवसरकी प्रतीक्षा कर रहा था। हर एक सैनिककी दृष्टि मुस्तफाकी ओर थी। सहसा मुस्तफाका हाथ उठा, और सैनिक निकल पड़े। सबसे आगे रणकी मस्तीमें झूमता हुआ स्वयं चल रहा था; मुस्तफा कमाल! अँगरेज़ सैनिक भी सजग थे। गोलियां बरसने लगीं। पर चिन्ता नहीं, प्राणोंका मोह नहीं। मुस्तफाके आगे था टर्कीका चित्र। वह उसे देखता हुआ गोलियोंकी वर्षामें भी आगे-बढ़ता ही गया। एक गोली सनसनाती हुई आई, और मुस्तफा की जेब घड़ीको चूर-चूर करके चली गई। पर मुस्तफाने उसकी ओर ध्यान तक न दिया उसे ध्यान था, केवल आगे बढ़ने का। वह बराबर आगे बढ़ता ही गया। उसका अदम्य पौरुष, उसका अजेय साहस! अङ्गरेज़ सिपाहियोंके दम टूट गये, और वे मैदान छोड़कर भाग गये!

उस दिनसे मुस्तफाकमाल हो गया, मुस्तफा कमाल पाशा!

समस्त टर्कीमें उसके पौरुषकी कीर्ति गूँज उठी, क्यों न हो, उसने अपने पौरुषसे शत्रुओंके हाथसे टर्कीकी परीक्षा की थी न !

४

वह उपेक्षित था। वही मुस्तफा कमाल, जिसके पुरुषार्थ को देखकर श्री हँस रही थी, गौरव विहँस रहा था। वह मैदान मारता था, बार-बार टर्कीको काल-कवलित होनेसे बचाता था। किन्तु फिर भी शासन-सत्ताधारियोंके दरबारमें पूछ नहीं लोग उसके साहसकोदेखकर जलते थे, उसके उठे हुए मस्तक से ईर्षा करते थे। जब कभी वह राजधानी कुस्तुन्तुनियामें पहुँच जाता, अधिकारियोंके प्राणोंपर हिम वर्षा होने लगती। लोग सोचते, कहीं यह खूँखार सिंह अशक्त शासन-तंत्रको उलटकर उनपर अपना आधिपत्य न स्थापित कर ले। इसी-लिये षड्यन्त्रसे, जालसे, वह राजधानीसे सुदूर ही फेंका रहता।

उसे सेनाभी कमजोर ही दी जाती, वहुत कमज़ोर, थके हुये निराशाकी गोदमें सोने वाले मुर्दा सिपाही उसीके पल्ले पड़ते ! पर पह पुरुषार्थका पुतला उनमें भी एक जान डाल देता, उन्हें भी उठाकर जोशके ऊँचे आसनपर विठा देता। सीरियाके मोर्चेपर उसने बिलकुल यही किया। लम्बा रेगिस्तान, रेगिस्तान की भीषण गर्मी, और सिपाही थे परिश्रान्त, निराशाकी गोदमें सोन वाले। अवसर मिलते ही सेनासे निकलकर भाग जाते थे। उधर अँगरेज़ोंकी सेना बड़ी प्रबल, बड़ी सुसंगठित ! उसे देखते

ए कमालकी सेना कुछ नहीं थी, जैसे पहाड़के समक्ष लघु
तेनका। किन्तु कमालका तो ऐसी परिस्थितियोंको पार करनेके
लेये जन्म ही हुआ था। सामने अङ्गरेजोंकी विशाल सेनाको
देखकर उसका पुरुषार्थ हँस पड़ा, और वह आवेगके साथ
अपने थके सैनिकोंको जीवन बाँटने लगा। पर दुर्भाग्य वह
बीमार होकर चारपाईपर पड़ गया।

सितम्बरका महीना था। मुस्तफा बीमार होकर चारपाई
पर रोगोंसे लड़ रहा था। वह रह-रह बेचैन हो रहा था,
आकुल हो रहा था। शत्रुके तोपोंका गर्जन जब वह सुनता,
तब उसके प्राणोंमें बेकली सी लोट जाती। इन्हीं दिनों एक
सैनिकने उसे समाचार दिया, कि अँग्रेज़ोंका आक्रमण उसीके
मोर्चेपर होनेवाला है! मुस्तफा, सजीवताकी मूर्ति मुस्तफा,
इससे तनिक भी विचलित न हुआ। उसने अपने उच्च अधि-
कारियोंके पास तुरन्त यह खबर भेज दी। किन्तु उच्च अधि-
कारियोंने इस खबरपर विश्वास ही न किया।

मुस्तफा बीमार था, चारपाई पर पड़ा हुआ कराह रहा था।
किन्तु उसकी रगोंमें देश-भक्तिका जोश था, स्वदेशकी ममता
का उन्माद था। अँग्रेजोंके आक्रमणके समाचारको सुनकर
उसकी नसोंमें बिजली दौड़ गई। वह उछलकर चारपाई पर उठ
बैठा। ज्वर भयंकर रूपसे शरीर पर अधिकार जमाये हुए था।
शरीरके अङ्ग-अङ्ग पीड़ासे व्यथित हो रहे थे। गर्मीकी भी उष्णता
रह-रहकर प्राणोंको मूर्च्छनाकी गोदमें सुला रही थी। किन्तु

मुस्तफाके हृदयमें जब जागृतिका समुद्र उमड़ा, तब सब दुखद परिस्थितियाँ जैसे सो सी गईं। मुस्तफा अपनी सारी वेदनाओंको भूलकर बाहर निकल पड़ा, और काममें जुट पड़ा!

अँगरेज़ों की प्रचण्ड सेना! उसने अवसर पाकर मुस्तफाकी सेनापर धावा कर दिया! मुस्तफा भी कैसा अद्भुत वीर, कैसा प्रचण्ड साहस-शक्तिवाला! अपनी उस छोटी सी टुकड़ीको ले करके ही मैदानमें कूद पड़ा। अँग्रेज़ी सेना चाहती थी मुस्तफा को निरुपाय करके उसे अपने सिकंजेमें फांस लेना! किंतु रणांगनका अद्भुत खिलाड़ी मुस्तफा! गोलियों की सरसराहट और तोपों की गरगराहटमें भी आगे बढ़ता ही गया। मुस्तफा की समस्त सेना रणदेवताके चरणों पर चढ़ गई, किंतु मुस्तफा बच गया, बिल्कुल बच गया। कईबार अँग्रेज़ी हवाई जहाजोंने उसके ऊपर बम बरसाये। किंतु उसका हिमालय सा उठा हुआ मस्तक नत न हुआ। वह उस भयंकर परिस्थितिमें भी अपने हिमालयसे उठे हुए मस्तकको ऊपर उठाकर बराबर चलता रहा। गोलियाँ बरसतीं रहीं, गोले गिरते रहे, तोपें गरजती रहीं, ऊपर आकाशपर बमोंको भरे हुए हवाई जहाज़ मँड़राते रहे किंतु वह बराबर चलता रहा आगे बढ़ता रहा। वह अद्भुत साहसी था, अद्भुत पुरुषार्थी था! उसका अदम्य पुरुषार्थ। पुरुषार्थमें भी पुरुषार्थ भर देता है।

५

टर्कीका सुल्तान वहीदुद्दीन। वह अङ्गरेजोंके हाथोंका

खिलौना बना हुआ था। अगरेज जिस ओर चाहते, वह उसी ओर झुकता। कहनेको वह टर्कीका सुल्तान था, पर वास्तवमें वह था अंगरेजोंका क्रीत दास, उनकी इच्छाओं-अभिलाषाओं का गुलाम। वह अंगरेजोंकी तालपर उन्मत्त होकर थिरक रहा था, पर अंगरेज़ उसकी टर्कीको लूट रहे थे, और लूट रहे थे उसकी मातृभूमिको। उस टर्कीको लूट रहे थे, जिसकी गोदमें मुस्तफा था। हाँ, वही मुस्तफा, जिसकी एक-एक सांसमें देश-देशकी वीणा बज रही थी जिसके एक-एक स्वरमें जीवन और जागृतिका समुद्र उफता रहा था।

मुस्तफा भला इसे कब बर्दास्त करता, कि उसकी टर्की लूटी जाती हो, उसकी प्यारी मातृभूमि विदेशियोंके पैरोंसे रौंदी जाये। वह मृत प्राय तुर्कोंकी नसोंमें सजीवताका रूप उत्पन्न करने लगा, मातृभूमिके उद्धारके लिये उनकी रगोंमे शक्तिका सागर दौड़ाने लगा। देखते ही देखते टर्कीके सोये हुये तुर्क अंगड़ाइया ले ले कर उठ बैठे। चारों ओर जीवन,और चारों ओर जागृतिका समुद्र। सुल्तानके साथ ही साथ अंगरेजोंको भी अपना सुनहला दुर्ग ढहता दृष्टि गोचर होने लगा।

अङ्गरेजों, और सुल्तान, दोनोंने मिलकर षड़यंत्रकी सृष्टि की। षड़यंत्रकी सृष्टि थी, टर्कीके सपूतोंको फंसानेके लिये, देश-भक्तोंको सर्वनाशकी गोदमें डालनेके लिये। मुस्तफा अंगरेजोंकी एक एक गतिको पढ़ रहा था, उनके एक रहस्यको भांप रहा था। उसने अपने साथियोंको सचेत किया। किन्तु वे न माने,

अन्तमें फंस गये अंगरेजोंके पिजड़ेमें। कितनोंको फांसियाँ हुईं कितनोंको देश निकाला। कितनोंको आजन्म कारागार मिला, और कितनोंको लम्बी लम्बी सजायें। जो बच गये, उनके सिरोंके लिये पुरस्कारकी घोषणा की गई। सारा टर्की एक बार देश भक्तोंसे उजाड़ सा हो गया।

टर्कीके जीवनमें वह एक अद्भुत युग था। एक ओर सुल्तान धर्मका अंचल पसार कर लोगोंसे सहायताकी भीख माँग रहा था; और दूसरी ओर प्रजा-तंत्रका नाद था। भाई-भाई, पिता-पुत्र, गुरु-शिष्य, धर्म और देशके नामपर एक दूसरे-का गला काट रहे थे। गाँव, गाँवमें, शहर-शहरमें, सुल्तान और मुस्तफाके समर्थक एक दूसरे पर बार कर रहे थे। आये दिन कोड़े बरसाना, खालें उधेड़ना, और शूलीपर लटका देना एक साधारण-सी बात हो गई थी। पर सुल्तान सुल्तान ही था। मुस्तफा मुस्तफा ही था। एक था मुल्कका सम्राट, और दूसरा था, देशवासियोंके हृदयका राजा। सम्राटके कोपकी ज्वाला धधक रही थी, और देशवासी अपने राजाके नामपर पतिंगेकी भाँति भस्म हो रहे थे, उसमें भुन रहे थे।

सन्ध्याका समय था। अंगोरामें मुस्तफा अपने तीन-चार साथियोंके साथ बैठा हुआ था। सभी सुल्तानके लिये विद्रोही थे। सुल्तानने हर एकके सिरके लिये पुरस्कारकी घोषणा की थी। स्वयं मुस्तफाके सिरके लिये भी। उस मुस्तफाके सिरके लिये जो विदेशियोंके पंजेसे अपनी मातृभूमिको बचाना चाहता था,

और जो चाहता था, अपने देशमें अपने देशवासियोंका शासन ! पग-पगपर आशंका थी, पग-पगपर विपत्तिका समुद्र ! सिरपर सुल्तानकी घोषणा, दायें-वायें, आगे-पीछे, चारों ओर शत्रुही-शत्रु ! स्वयं मुस्तफाके साथी भी विश्वास घातका अभिनय कर रहे थे। पर देश भक्तिका वह सजीव पुतला निश्चिन्ततासे अंगोराके उस छोटेसे मकानमें वैठा हुआ था।

वह चुप था। उसका सिर झुका हुआ था। उसके साथी भी चुप थे। सबके सब निराश, सबके सव गंभीर! अपने सजीव नेता मुस्तफाको निराशाके समुद्रमें डुवकियाँ लगाता हुआ देखकर लोग और भी निराश हो रहे थे। पर मुस्तफा निराश न था। वह चुपचाप हारमें जीत और मृत्युमें जीवन खोज रहा था। सहसा वह हिला, उसने अँगड़ाइयाँ लीं। शान्त वातावरण कम्पित हो उठा, जीवन और जागृतिका एक समुद्र लहरा उठा! निराशा भाग गई, आशाकी सुनहली ज्योतिसे सबके प्राण खिल उठे। सबने अपने हृदयमें अनुभव किया, उनके प्राण जागृतिके रथपर सवार होकर तेज़ीसे राष्ट्र-माताकी ओर बढ़े जा रहे थे।

धन्य था वह तुर्क, और धन्य था, उसका अदम्य पौरुष। उसने एक बार फिर देश-प्रेमके मतवाले गीत गाकर तुर्कोंकी नसोंमें जीवन दौड़ा दिया। चारों ओर राष्ट्रमाताकी जय जय कार, मुस्तफा कमालका वीर हुंकार ! सुल्तान और अंगरेजोंकी लाख चेष्टा पर भी प्रजातन्त्रका पौदा जाग पड़ा, लहलहा उठा !

मुस्तफाने इस पौदेको उगानेके लिये क्या क्या नहीं किया था ? अंगोरामें खाने-पीनेको भूलकर वह रात-रात भर जागता रहता था। प्रचण्ड आँधी की भाँति काममें जुटा रहता था, और सुसज्जित घोड़ा द्वार पर सदैव खड़ा रहता था। कौन जाने कब भागनेके लिये अवसर उपस्थित हो जाय! चारों ओरसे भयानक सम्वाद आ रहे थे, और चारों ओर खेलती थीं प्रतिकूल परिस्थितियां। पर मुस्तफा, बहादुर मुस्तफा उन्हींकी गोदमें बैठकर स्वाधीनताका मंत्र जप रहा था, प्राणका मोह नहीं, जीवनकी ममता नहीं। दोनोंको हथेलीपर लेकर निर्भयतासे शत्रुओंके समक्ष खेल रहा था। खेल रहा था उन्मत्तसिंहकी भाँति वह धन्य था। उसके पौरुषके गीत शब्दोंसे नहीं गाये जा सकते।

६

टर्की विजयके मदमें झूम रहा था। घर-घरमें मुस्तफा-कमालका नाम, कोने-कोनेमें उसकी कीर्तिकी चर्चा। अँग्रेज़ भाग चुके थे, जर्मन आ चुके थे, और यूनानी ? यूनानी हार पर हार खाकर सुदूरमें थकावट मिटा रहे थे। मुस्तफा भी लड़ते-लड़ते थक गया था, परिश्रान्त हो चुका था। सुरा और सुन्दरीकी साधनामें लग गया इस तरह लग गया, कि एकबार उसकी आँखोंसे सारा संसार हट गया। स्वय उसका टर्की भी। वह सबको भूल गया, अपनेको भी। सुराकी छलछलाती हुई धारा, सुन्दरीका मोहक संगीत! मुस्तफा उसीमें डूबकर सबको भूल गया, सबको !!

टर्कीका सिंह मुस्तफ़ा सुरा और सुन्दरीके मदमें बेहोश ! शत्रु फिर जाग उठे, अँगड़ाइयाँ लेने लगे। भागे हुए यूनानी सुदूर देशमें टर्कीको निगलनेके लिये ज़ोरदार तैयारियाँ करने लगे। मुस्तफ़ाने सुरा और सुन्दरीके मोदमें देशकी ओर झाँका, उसके प्राणोंने देशकी आवाज़ सुनी। देश उसे पुकार रहा था, अपनी रक्षाके लिये आँखोंको पसारकर उसको ओर देख रहा था। मुस्तफ़ाकी निद्रा टूट गई, सारे मोह-बन्धन शिथिल पड़ गये। शराबकी प्यालियाँ उसने चूर-चूर कर दीं। कन्धेसे चिपटी हुई सुन्दरीको अलग ढकेल दिया। वह अँगड़ाइयाँ लेकर खड़ा हो गया। बाज़ू फड़क उठे, छाती फूल उठी और वह गाने लगा, फिर देश प्रेमके तराने। उसके तरानोंको सुनकर तुर्क फिर झूम उठे, देश-प्रेमकी मस्तीमें नाच उठे और वह मस्तानी सेना साथमें लेकर चल पड़ा, यूनानियोंको दबानेके लिए।

थ्रेस पहुँचनेके दो मार्ग थे—एक समुद्रसे, दूसरा स्थलसे। कमालके पास जहाजकी कमी थी, इसलिये स्थल-पथसे उसने थ्रेस पहुँचनेका निश्चय किया। वह अपनी मस्तानी सेना लेकर स्थलके मार्गसे आगे बढ़ा। किन्तु यह क्या ? यह तो उसके समक्ष एक नई विपत्ति आ गई। उसने चनाकके पास आँख उठाकर देखा, सामने अङ्गरेज़ोंकी विशाल सेना !

कमाल चिन्तामें पड़ गया। सोचने लगा, अँगरेज़ोंसे झगड़ा मोल लूँ, या यूनानियोंपर आक्रमण करनेका विचार छोड़ दूँ। उसने अपनी सेनाकी ओर आँख उठाकर देखा, वह

अँगरेज़ोंकी उस विशाल और सुसंगठित सेनाके सन्मुख कुछ नहीं थो। फिर क्या कमाल पीछे हट जाये ? नहीं वह आगे क़दम बढ़ाकर पीछे हटना जानता ही नहीं था। उसने निश्चय किया जो हो, वह आगे बढ़ेगा और निश्चय बढ़ेगा।

सामने अँगरेजोंकी विशाल सेना पथ रोककर खड़ी हुई थी। मुस्तफ़ा कमाल अँगरेज़ोंसे लड़ना नहीं चाहता था। अँगरेज़ी सेनाका सेनापति हेरिंगटन भी नहीं चाहता था, कि वह मतवाले तुर्कोंसे छेड़-छाड़ करे। किन्तु फिर भी वह अटल पर्वतकी भाँति पथ रोककर खड़ा था। दोनोंके मनमें न लड़नेकी भावना थी, किन्तु स्पष्ट नहीं, गुप्त ! यदि कोई दूसरा सेनापति होता तो वह अँगरेजोंकी उस विशाल शक्तिको देखकर पीछे लौट जाता, यूनानियोंपर आक्रमण करनेका विचार त्याग देता; किन्तु वह कमाल था। उसमें कमालका पौरुष था, कमालकी शक्ति थी। एक बार पाशा फेंकनेके बाद वह हाथ खींचना जानता ही न था। उसने अपने जीवनमें कभी बढ़े हुए क़दमको पीछे न लौटाया, बढ़े हुए हाथको पीछे न खींचा। वह बढ़ा तो बढ़ता ही गया, और बढ़ता ही गया प्राणोंके मोहको छोड़कर, जीवन की ममताको त्याग कर !

फिर वह आज अपना क़दम कैसे पीछे हटा सकता था ? उसके पौरुषने, उसकी शक्तिने, उसे ललकारा। उसने रणोन्मत्त की भाँति अपनी सेनाको आगे बढ़नेकी आज्ञा दे दी। अँगरेज़ सैनिक लड़ेंगे तो जूझ मरेगा, न लड़ेंगे तो चुपचाप आगे निकल

जायेगा! कमालकी सेना आगे बढ़ी, अँगरेज़ सैनिक विशाल पर्वतकी भाँति पथ रोककर खड़े थे। स्थिति भयानक थी। जलती हुई भीषण अग्निकी गोदमें कमाल अपने थोड़ेसे सैनिकों के साथ अपने आप आगे बढ़ा जा रहा था। कमालने देखा अँगरेज़-सैनिकोंका दृढ़भाव! उसने शीघ्र अपने सैनिकोंको आदेश दिया, कि बन्दूकें उल्टी करके आगे बढ़ो।

अँगरेज़ोंकी विशाल सेना पर्वतकी तरह खड़ी ही रह गई, और कमाल उसे चीरकर अपने सैनिकोंके साथ आगे निकल गया। अभी वह कुछ ही दूर जा पाया था, कि ब्रिटेन, फ्रांस, और इटलीकी ओरसे उसके पास सुलहके पैग़ाम भेजे गये। उसने इन देशोंसे सुलह करके टर्कीको उस स्थानपर बैठा दिया, जहाँ स्वाधीन देशोंका गर्व था, स्वतंत्र राष्ट्रोंका अभिमान था।

मुस्तफ़ाकी विजय थी, एक नहीं, चारों ओर! घर-घरमें उसकी कीर्त्तिका गान होता था, हृदय-हृदयमें होती थी प्रशंसा! वह हरएक का पूज्य था, हरएक का सम्मानित था। लोग उससे डरते थे, कांपते थे, वल्कल पत्तेकी भाँति। वह जिसकी ओर संकेत करता, वही हिलता, वही बोलता और वही उठता-बैठता था। शेष सभी शांत समुद्रसे निश्चल! वह विजयी था। व्यक्ति-व्यक्ति प्राणी-प्राणी पर उसके गौरवकी छाप थी, आतंक की महिमा थी। वह धीरे-धीरे टर्कीका सर्वेसर्वा बन रहा था, डिक्टेटर!

टर्कीके बाहर उसकी विजयका नाद बज रहा था। संसार

के सभी राष्ट्र दिल खोलकर उसकी प्रशंसाके गीत गा रहे थे। किन्तु टर्कीके भीतर उसके साथी ईर्ष्याकी अग्नि प्रज्ज्वलित करके मन ही मन जल रहे थे, भस्म हो रहे थे। वे चाहते थे, टर्कीमें विद्रोह करके मुस्तफ़ाको सर्वनाशकी गोदमें डालना! उनकी दृष्टिमें मुस्तफ़ा धर्म-विद्रोही था, नास्तिक था, और था इस्लाम पर कर्कश कुठाराघात करनेवाला। वे इन्हीं भावोंकी ओटमें तुर्कोंको उभाड़ने लगे, उन्हें विद्रोही बनाने लगे।

पर मुस्तफ़ा कमाल! वह जब अपनी प्रचंड-गतिसे बड़े-बड़े वृक्षोंको उखाड़ चुका, तब ये किस खेतकी मूली थे। उसने एक एककी खबर ली, एक एकको फांसीके तख्तेपर चढ़ाया। टर्कीका सुल्तान, जो मुसलिम जगतका ख़लीफ़ा, बना हुआ था, पथका भिखारी बन गया। उसने 'सुल्तान' और 'ख़लीफ़ा' के पदको तोड़ कर टर्कीमें प्रजातन्त्रकी स्थापना की और स्वयं हुआ उसका डिक्टेटर, एक मात्र सर्वेसर्वा।

सुल्तानके पदको विनष्ट करनेके लिये कमालने अद्भुत् पुरुषार्थ का परिचय दिया था। अद्भुत्, हां अत्यन्त अद्भुत्! उसने केवल पांच मिनटमें ही सारे मुसलिम-जगतमें एक महा परिवर्तन उपस्थित कर दिया। ऐसा परिवर्तन कि लोग उसे देख कर चौंक उठे, आकुल हो उठे! किन्तु साहस किसमें था, जो मुस्तफ़ाके सामने सिर उठाता, उसकी बातोंका विरोध करता! उसने क्षणमात्रमें समस्त मुसलिम-जगतके पूज्य 'सुल्तान' और 'ख़लीफ़ा' के पदका सर्वनाश कर दिया।

अंगोरामें टर्कीकी महासभाका अधिवेशन हो रहा था। मुस्तफ़ा कमाल भी वहां जा पहुंचा। उसकी जय-जयकारसे महासभाका भवन गूंज उठा, प्रकम्पित हो उठा। कमालने महासभाके सामने प्रस्ताव रक्खा, सुल्तान और खलीफ़ाका पद अलग-अलग दिया जाय। सुल्तानका पद सदाके लिये तोड़ दिया जाय और खलीफ़ा केवल धर्मगुरु मात्र रहे। कमालका यह प्रस्ताव क्या था, लोगोंके लिये वज्र। लोग चौंक पड़े, तिलमिला उठे। पर अब क्या होता है? अब तो कमालका क़दम आगे बढ़ चुका था, और वह बढ़े हुये क़दमको पीछे हटाना जानता ही नहीं था।

दूसरे दिन यह प्रस्ताव एक विशेष समितिके सामने उपस्थित हुआ। विशेष समितिमें मुल्लाओं, वकीलों और मज़हब-परस्तोंका बहुमत। क़ुरानकी आयतें देखी गईं; शरियतोंकी छान-बीन की गई। सर्वत्र खलीफा, ईश्वर सम पूज्य! कमालकी हार निश्चित सी हो गई। वह स्वयं विषय-समिति में फौजी पोशाकमें बैठा हुआ सिंहकी भांति गुर्रा रहा था। ज्यों-ज्यों क़ुरानकी आयतें उलटी जा रही थीं; त्यों त्यों उसके क्रोधका ज्वालामुखी भड़कता जा रहा था। अन्तमें उसके धैर्यका बांध टूट गया, और वह कूदकर समितिके मध्यमें जा पहुंचा। उसने सिंहको भांति गरजकर कहा,—"सुलतानने अपना अधिकार जनतासे छीनकर लिया था, आज जनताने भी उसी तरह सुलतानसे अपना अधिकार छीन लिया है। सुलतानका पद खलीफ़ाके पदसे अलग है, और वह अवश्य नष्ट किया जायगा।

आप लोग मानें या न माने, किन्तु यह होकर रहेगा। मान लेने पर अन्तर इतना ही रहेगा, कि आपलोगोंमेंसे कई व्यक्तियोंके सिर धड़से अलग होनेसे बच जायेंगे ?'

सभा-भवनमें सन्नाटा-सा छा गया। लोग आतंकित हो उठे। क्यों न हो, सिंह गुर्राया था न। बूढ़ा मौलवी, जो समितिका सभापति था, जल्दीसे उठा, और बोल उठा, ग़ाज़ीका कहना ठीक है. सुलतानका पद तोड़ देना चाहिये। सबने स्वरमें स्वर मिलाया। सदस्य गण प्रस्तावको एक मत से पास करके सभा-भवनसे भाग गये, इस तरह भाग गये जैसे सिंहको देखकर भेड़िये भाग जाते हैं। प्रस्ताव जब राष्ट्रीय महा-सभामें पहुँचा, तब वहाँ भी लोगोंने अड़ंगा लगाया। किन्तु कमालकी आंधी सी प्रगतिमें उस अड़ंगेका क्या अस्तित्व ? कमाल पिस्तौल सँभालकर सदस्योंके बीचमें कूद पड़ा। उसने गरजकर कहा, सावधान ! मेरे कहनेके अनुसार सुलतानके पदको समाप्त करो !

किसमें साहस था, जो उस सिंहकी आवाज़को सुननेपर भी अपना विरोध प्रगट करता ? सर्व सम्मतिसे सुल्तानका पद समाप्त कर दिया गया और उसके कुछ दिनों पश्चात् खलीफ़ा का पद भी ! दोनों भिखारीकी भाँति टर्कीसे विदा हो गये, और विदा हो गये सदा सर्वदाके लिये, धर्मकी जगह पर राष्ट्र का गान होने लगा। गान होने लगा, मुस्तफ़ा कमाल पाशाके गौरवका, लोग उसे अपना सर्व-सर्वा मानकर उसके पुरुषार्थकी छाया में सुखकी नींद सोने लगे

डीवेलरा

१

आयरलैण्डके दासतापूर्ण जीवनमें स्वाधीनताका महामंत्र फूँक देने वाला डीवेलरा एक दिन अनाथ था। आज समस्त आइरिश जाति उसपर अपना महागर्व प्रगट करती है, किन्तु एक दिन वह निराश्रित था, दैवके कोपके कारण अपने पिता नामक अमूल्य धनसे वंचित था। एक साधारण बालकके सदृश वह भी न्यूयार्ककी गलियोंमें भटकता-फिरता था। उसे कोई न जानता था। संसारके महासागरमें वह भी एक लघु तिनकेके सदृश बहा जा रहा था, किन्तु उसकी माँ महत्त्वाकाँक्षिणी थी। वह चाहती थी, उसका ईमन संसारमें कुछ बने। पादरी बने,

नेता बने, सिपाही बने, चाहे जो बने, किन्तु कुछ बने अवश्य। इसी-लिये उसने इस बेबापके लड़केको अपने भाईको सुपुर्द कर दिया, और उसने उसे अपने साथ आयरलैण्ड ले जाकर सचमुच कुछ बना दिया। आज उसी कुछ पर तो समस्त आइरिश जाति अपना आत्मीय गौरव निछावर करती है।

ईमन, बेबापका आश्रय-हीन लड़का निराश्रित तो था, किन्तु उसने कभी निराश्रित जीवनका अनुभव नहीं किया। उसकी माँ, और उसके मामा, दोनों प्रारम्भ कालसे ही उसके सुख और उसकी सुविधाके लिये चिन्तन किया करते थे। उसका मामा तो अपने भानजे ईमनको प्राणोंमें छिपाकर रखता था। वह जब स्कूलमें पढ़ने वाले अपने छोटेसे ईमनकी उसके अध्यापकों द्वारा प्रशंसा सुनता, तब उसका हृदय बाँसों उछल पड़ता था, और वह मन ही मन कह उठता था, कि वह अपने इस ईमनको अवश्य संसारमें संसारका कुछ बना देगा।

ईमन भी विचित्र था, अद्भुत था। उसके दुबले-पतले शरीरके भीतर एक अद्भुत जीवन-देवता बसा हुआ था। वह अपने इसी जीवन-देवताकी कृपासे स्कूलमें ऐसे-ऐसे चम-त्कार पूर्ण कार्य कर देता, कि उसके अध्यापकोंको उसके बुद्धि-कौशल पर आश्चर्य प्रगट करना पड़ता था। वह जिस-जिस स्कूल और कालेजमें पढ़नेके लिये गया, अध्यापकोंका प्यारा बना रहा। वह जो कुछ पढ़ता था, बड़े ध्यान और परिश्रमसे पढ़ता था। उसकी जिज्ञासा और ज्ञानकी

पिपाशा कभी शान्त ही न होती ! स्कूलमें जब वह अपनी कक्षामें अपनी पढ़ाई समाप्त कर लेता, तब वह ऊपर की कक्षा के कमरेमें निकल जाता और वहाँ बैठकर अध्यापक तथा विद्यार्थियोंकी बातें सुनता। वह अपने समय को नष्ट करना स्वीकार न करता था। घर पर जब कभी वह पढ़ता हुआ होता और उसके मामा उसी कमरेमें कुछ मनुष्योंसे बाते करने लगते, तब वह उठकर दूसरे कमरेमे चला जाता था, और अपने मनको पुस्तकोंके पन्नोंमें टिका देता था। अपनी पाठ्य-पुस्तकोंके अतिरिक्त वह और भी बहुत सी पुस्तके पढ़ा करता था। उसके हृदयमें ज्ञान प्राप्त करनेकी एक विचित्र लगन थी। वह अपनी ज्ञानकी पिपासाके लिये ही पुस्तकें पढ़ता, बड़े-बूढ़ोंसे कहानियाँ सुनता और उनसे एक प्रकारकी मन ही मन शिक्षा भी ग्रहण किया करता था। उसकी इसी भावनाने, उसकी इसी संलग्नताने, उसे लोगोंकी आँखोंका प्यारा बना दिया और वह देखते-देखते जीवनके मैदानमे बहुत आगे निकल गया। इतना आगे निकल गया, कि उसे लोग धन्य कहने लगे, और महाधन्य !!

ईमन डीवेलरा अपनी बाल्यावस्थासे ही स्वाभिमानी है, देशके गौरवको सबसे अधिक महत्व देने वाला है। आज के स्वाभिमानकी झलक उस समय भी उसकी आकृतिपर दिखाई देती थी. जिस समय वह निरुपाय अवस्थामें साधारण बालकोंके सदृश घूम रहा था। उस समयकी उसके जीवनकी

एक बड़ी विचित्र घटना है। ऐसी विचित्र घटना है, जो कि उसके हृदयमें बसे हुये स्वाभिमान और देश गौरवको बिलकुल ठीक-ठीक प्रगट करती है। देखिये उस घटनाकी ओर!

ईमन एक दिन एक गलीमें घूम रहा था। गलीमें एक अँगरेज़का घर था। घूमते-घूमते वह एक अँगरेज़के घरमें चला गया। अँगरेज़ने उसे अपने पास बुलाकर उसके सामने दो झण्डे रक्खे। एक झण्डा यूनियन जैक था, और दूसरा था, अमेरिकन। अमेरिकन झण्डेपर तारेके साथ ही साथ धारियाँ भी बनी हुई थीं। ईमनने दोनों झण्डोंको ध्यानसे देखा। और कुछ देर तक ध्यानसे देखनेके पश्चात् उसने अमेरिकन झण्डेको हाथमें उठा लिया। अङ्गरेज़ने हँसकर कहा, 'तुम अपने झण्डेको मुझे दे दो, और उसके बदलेमें दूसरे झण्डेको ले लो।' किन्तु ईमनने दूसरे झण्डेको हाथमें लेना स्वीकार न किया। उसने अपने झण्डेको दृढ़ताके साथ पकड़ लिया। अङ्गरेज़ने उसकी जेबमें यूनियन जैकको खोंसकर कहा, अच्छा तुम इन दोनों झण्डेको ले जाओ! किन्तु ईमनको यह भी स्वीकार न हुआ। उसने झट यूनियन जैकको जेबसे निकाल कर भूमिपर रख दिया। बालकके इस स्वाभिमानको देखकर वह अङ्गरेज़ आश्चर्य-चकित हो गया, और साथ ही यह कह भी उठा, कि यह बालक बड़ा होने पर अपने देशका गौरव होगा।

ईमन बड़ा होनेपर सचमुच अपने देशका गौरव हुआ,

और हुआ उसके सिरका मुकुट। सारा आयरलैण्ड आज उसकी कीर्तिके गीत गा रहा है। उसने सदियोंसे अन्धकारमें पड़ी हुई आयरिश जातिको एक ऐसे लोकमें पहुँचा दिया, जहाँ पहुँचकर वह धन्य हो गई, आदर्शनीय वन गई। धन्य है ईमन डीवेलरा, और धन्य है उसका पुरुषार्थ। उसने समय को बदल दिया, परिस्थितिको अपनी शक्तिके नीचे सुला दिया। समयको वदलने वाले संसारमे वहुत कम लोग हुआ करते हैं। उन्हीं लोगोंमें डीवेलरा भी एक है। उसने अपने साहस और अपनी शक्तिसे एक देशके पीड़ित मानव-समुदाय को मानवताके सन्निकट पहुंचाया है, उसे उसके मानवी अधिकारोंसे परिचित कराया है। इसीलिये तो उसका पुरुषार्थ और उसका साहस संसारके लिये अधिक धन्य वन गया है।

२

वह वालन्टियर! वही डीवेलरा, जो आज आयरलण्डका गौरव है, उसका जातीय अभिमान है, उन दिनों वालन्टियर था। वालन्टियर था अपने देशका, अपनी पद-दलित जाति का। देशके करुण चीत्कारने उसके हृदयको व्याकुल वना दिया। उससे नहीं देखा गया, अपने देशवासियोंका दयनीय चित्र, अपनी मही-माताका अपमान। वह एक सच्चे पुरुषार्थोंकी भाँति अपने सुनहले भविष्यको अन्धकारके समुद्रमें डुवोकर विपत्तियोंकी झाड़ीमें कूद पड़ा। सचमुच वह विपत्तियों ही की झाड़ी थी। अङ्गरेज आयरलैण्डको और उसके

उठने वाले अग्रगामी जवानोंको वुरी तरहसे अपनी आँखोंका काँटा वनाये हुये थे। किसी पर सन्देह हुआ नहीं, कि उसे गिरफ़तार करके कारागारमे पहुंचा दिया, फाँसीके तख्तेपर चढ़ा दिया। ऐसी भयानक अवस्थामें देशका वालन्टियर वनना, उसकी स्वाधीनताके गीत गाना एक सच्चे पुरुषार्थीका ही काम है। ऐसे पुरुषार्थीका काम है, जिसे न प्राणोंकी ममता हो, न जीवन का मोह हो।

डीवेलरा ऐसा ही पुरुषार्थी है, ऐसा ही अपने देशका उज्वल रत्न है। वह सचमुच अपने देश और अपनी जातिके कल्याणके लिये प्राणोंको हथेलीपर लेकर निर्भय चित्तसे घूमा-करता है। उसने एक नहीं, अनेक स्थानपर, इसका परिचय दिया है, अपने इस महान त्यागको प्रगट किया है। आयर-लैण्डकी क्रान्तिके युगमें वह अपने साथियोंसे सबसे अधिक आगे रहता था। जो आज कोई न कर सकता, उसे करनेके लिये डीवेलरा प्रतिक्षण तैयार रहता था। उसकी वीरता, उसकी धीरता, और उसके पुरुषार्थको देखकर उसके साथी आश्चर्य-चकित हो जाते थे, और मुग्ध कण्ठसे उसकी प्रशंसा करने लगते थे। भयानकसे भयानक परिस्थितिमें भी वह एक धैर्यवानकी भाँति सौम्य बना हुआ दिखाई देता था। आपत्तियाँ, वाधायें उसके लिये कुछ थी ही नहीं। वह एक-एकका सामना करनेके लिये प्रतिक्षण तैयार रहता था। उसके दुवले-पतले शरीरमे उसका ऊँचा ललाट, उसकी भूरी-भूरी

आंखें महाशक्तिके गीत गाती थीं। जो उसकी ओर देखता वह अपने ही आप समझ जाता, कि यह पुरुषार्थी है, जीवन जागृतिका सजीव पुतला है, और युद्धस्थलका अपूर्व साहसी खिलाड़ी। उसके हृदयमें बसे हुए इसी मानवी जौहरको देखकर एक फ्रांसीसी लेखकने उसके सम्बन्धमे लिखा है। और बिलकुल ठीक ही लिखा है: "उसके लोहेके शरीरमे फौलादकी रूह विद्यमान है। उसकी आकृति देखकर अपने आप यह विचार उत्पन्न हो जाता है, कि उसमे बुद्धिमत्ता और शीतल शक्ति है, किन्तु उसका मन उदार और ऊष्ण है।"

क्रान्तिके युगमें डीवेलराकी शक्ति, उसका साहस, और उसका पुरुषार्थ, सचमुच आदर्शनीय था। सचमुच उसके लोहेके शरीरमें फौलादकी रूह विद्यमान है। वह जब अपने ६ फीटवाले ऊँचे शरीरके कन्धेपर बन्दूक रखकर चलता, तो शत्रु-सैनिक उसे देखकर कम्पित हो जाते, और मन ही मन उसके साहसकी महत्ताको स्वीकार कर लेते। वह उन दिनों वालन्टियर था, और था एक छोटी सी टुकड़ीका सरदार। युद्धके दिनोंमें डीवेलराको जिस मोर्चेपर नियत किया गया था, उसने वहां अपनी टुकड़ीके साथ बड़े साहसका परिचय दिया था। उसकी टुकड़ीमे केवल सौ मनुष्य थे, और उधर थी अङ्गरेजोंकी चालीस सहस्र मनुष्योंकी एक सुशिक्षित सेना। किन्तु साहसी डीवेलरा अपने इन्हीं थोड़े से मनुष्योंके साथ इस विशाल सेनाके दांत खट्टे कर रहा था।

किन्तु क्रान्ति सफल न हुई। क्रान्तिके सनिकोंको अँग-रेज़ोंके सामने आत्म-समर्पणकर देना पड़ा। आत्म-समर्पण कर देनेवालोंमेंसे डीवेलराका स्थान सबसे पीछे था। अपने उच्च अफ़सरकी आज्ञा मिलनेपर भी उसने सहसा आत्म-समर्पणके सम्वादपर विश्वास न किया था। उसे जब तक दृढ़ विश्वास न हो गया, वह अन्त तक लड़ता रहा, और लड़ता रहा, बड़े ही साहसके साथ, बड़े ही पुरुषार्थके साथ! आत्म-समर्पण करनेके समय भी उसने पराजय स्वीकार न की। आत्म-समर्पण करनेके समय उसने बड़ी ही दृढ़ताके साथ कहा था, कि—"मेरे साथ जो व्यवहार करो, किन्तु मेरे साथियोंके साथ उचित व्यवहार करना होगा।" क्यों न हो, वह पुरुषार्थी था न! पुरुषार्थियोंको कभी अपने सुखकी चिंता नहीं होती। वे दूसरोंके कल्याणके लिये संसारमें उत्पन्न होते हैं, और दूसरोंकी ही सेवा करते-करते संसारसे चले जाते हैं।

३

वह अन्धकारकी राशिसे चमकता हुआ निकल रहा था। ज्यों-ज्यों उसकी ज्योति बढ़ने लगी, प्रकाश ज्वलन्त होने लगा, त्यों त्यों अङ्गरेज़ी सरकार उसे अपने पथका, अपने साम्राज्य का कांटा समझने लगी! अङ्गरेज़ी सरकारके लिये कांटा होने पर भी वह अपनी जातिके लिये एक ज्योति बनकर जाग रहा था, एक प्रकाश बनकर उदय हो रहा था। वही

डीवेलरा, आयरिश जातिका युवक नेता। उसकी रग-रगमें देशका अभिमान था, अपनी मातृ-भूमिका गौरव था। वह अपने देश और अपनी जातिके कल्याणके लिये प्रतिक्षण हथेलीपर जान लेकर घूमा करता था! उसने थोड़े ही दिनोंमें अपने त्यागसे, अपने पुरुषार्थसे, और अपने साहससे सारे आयरलैण्डमें अपनेको चमका दिया, ऐसा चमका दिया, कि उसकी ज्योतिको देखकर लायडजार्ज ऐसे कूटनीतिज्ञ अँगरेज भी काँप उठे थे, भयभीत हो गये थे!

डीवेलरा युवक था, कम उम्रका था, किन्तु बड़े-बड़े अनुभवी नेता उसमें अपना विश्वास प्रगट करते थे। वह जहाँ पहुँच जाता, वहाँ किसीकी न चलती। सबको उसकी महत्ता स्वीकार करनी पड़ती। लोग देखते ही रहते, और वह अपना काम करके आगे निकल जाता था। वह लोगोंकी भाँति बातें कर करके ही शान्त न हो जाता था। शान्त तो वह तब होता था, जब उसके मुखसे निकली हुई एक-एक बात पूरी हो जाती थी। वह अपनी एक-एक बातको पूरी करनेके लिये उद्योग करता, परिश्रम करता, और आवश्यकता पड़नेपर अपने प्राणोंको सर्वनाशकी आगमें भी झोंकनेके लिये तयार रहता! कठिनसे कठिन विपत्तियाँ झेलता, भयानक परि-स्थितियोंका सामना करता। किन्तु वह अपनी बातके लिये अन्त तक लड़ता रहता, उसके लिये अदम्य पुरुषार्थ प्रगट करता रहता, उसके इन्हीं गुणोंने तो उसे आयरिश जातिके

हृदयमें बैठा दिया, और समस्त आयरिश जाति अपना सब कुछ भूलकर उसकी ओर आशाकी दृष्टिसे देखने लगी।

संसारके राजनीतिक-जगतमें डीवेलराके सदृश कदाचित ही कोई ऐसा नेता हुआ हो, जिसने अपनी थोड़ी अवस्थामें ही डीवेलराके सदृश अपने देशवासियोंके हृदयमें घर कर लिया हो। अपने इस युवक नेताका उसके देशवासी बड़ा सम्मान करते थे, और सम्मान करते थे, अपने हृदयसे, अपने प्राणोंसे। जहां वह पहुँच जाता, बच्चे सभी ओरसे उसे घेर लेते। सभी सहस्रोंकी संख्यामें उसका स्वागत करते, उसकी बातें सुनते और उसे प्रोत्साहन प्रदान करके उसकी पीठ ठोंकते थे। दूसरे शब्दोंमें वह समस्त आयरलैण्डका खिलौना था। सब बड़ी ही प्रसन्नता और बड़ी ही संलग्नताके साथ अपने इस खिलौने से खेल रहे थे। आयरलैण्डके प्रत्येक बच्चेको; प्रत्येक बृद्धको और प्रत्येक तरुणको डीवेलराकी एक-एक बातमें किसी चिर-सत्यका आभास मिल रहा था और वे इसीलिये उसपर मुग्ध थे, उसका सम्मान करते थे।

वह था भी सम्मान करनेके योग्य! पद-दलित जातियाँ यदि अपने ऐसे युवक नेताका सम्मान न करें, उनकी बातोंमें विश्वास न प्रगट करें, तो यह उनका दुर्भाग्य ही है। आय-रिश जातिने अपने युवक नेताका सम्मान करके अपने आपको संसारमें धन्य बना लिया। आयरिश जातिके इस युवक नेतामें कितना साहस था, कितनी शक्ति थी, कितना पुरुषार्थ

था। वह अँगरेज़ी सिपाहियोंसे घिरे हुए सभास्थलमें भी चला जाता, और वहाँ भी यह कह आता, कि हमलोग जहरीली गैस, टैंक सौर सहस्र गाड़ियोंसे भयभीत होनेवाले आसामी नहीं हैं। हमारे कार्यकी सीमा तो केवल एक ही है, और वह यह, कि हमारे समस्त कार्यक्रम नैतिक न्यायपर निर्भर हों!

डीवेलरा आयरलैण्डकी स्वाधीनताके पथपर दिनों दिन प्रचण्ड आंधीकी भांति आगे बढ़ाजा रहा था। ज्यो-ज्यों वह आगे बढ़ रहा था, त्यों-त्यों बृटिश सरकार भी उससे शंकित होती जा रही थी। अन्तमें बृटिश सरकारको अच्छी तरह यह बात मालूम हो गई, कि आयरिश जातिके इस युवक सिंहको पंजेमें लाना सरल काम नहीं। वह सरकारके दमन चक्रके सामने भी सीना खोलकर अपने रास्तेपर चलता था। वह बड़ीसे बड़ी विपत्तियोंको हँसता हुआ बर्दाश्त कर लेता था। वह सरकारके विछाये हुए जालोंको अपने बुद्धि कौशलतासे छिन्न भिन्नकर डालता था। वह पुरुषार्थी था। वह अपने पुरुषार्थके सम्मुख पहाड़को भी तिनका समझता था उसके उसी पुरुषार्थने, उसकी इसी निर्भयताने तो उसे विजयी बनाया, और बनाया समस्त आयरिश जातिका सिरमौर!

वह कैदी था। वही डीवेलरा, जो आयरलैण्डकी स्वाधीनताके गीत गाता था, जो आयरलैण्डके पीड़ित मानव-

समुदायके कल्याणके लिये अपना सिर हथेलीपर लेकर घूमा करता था। देशकी सेवाके पुरस्कार-स्वरूप सरकारने उसे जेलमें बन्द कर दिया था। वह पीड़ितोंकी सेवा करता था, उन्हें ऊपर उठानेके लिये प्रयत्न करता था, किन्तु अँगरेज़ी सरकार समझती थी उसे, अपनी आँखोंका काँटा, अपने साम्राज्य का प्रबल शत्रु! इसीलिये पुरुषार्थका वह पुतला, जीवन और जागृतिकी वह सजीव मूर्ति पकड़कर जेलमें बन्दकर दी गई थी। सरकार समझती थी, कि उसे कारागारकी कोठरीमें बन्दकर देनेसे जीवनकी ज्योति समाप्त हो जायगी, किन्तु न वह समाप्त हुई न बुझी। समाप्त होने और न बुझनेकी कौन कहे? डीवेलराके गिरफ़्तार होते ही जीवनकी ज्योति और भी अधिक देदीप्यमान हो उठी। सारा आयरलैण्ड उससे आलोकित हो उठा। देशके कोने-कोनेमें जीवन-ज्योतिकी लहर बिखर पड़ी, और आयरिश जातिका बच्चा-बच्चा अपने पुरुषार्थी नेताकी जय-जयकार करने लगा! उसी नेताकी जय-जयकार करने लगा, जो जेलमें बन्द था, और जिसे बृटिश सरकार अपनी आँखोंका काँटा समझती थी!

वह देश भक्त था, पीड़ित मनुष्योंका सेवक था, किन्तु अँगरेज़ी सरकार उसे प्रबल विद्रोही समझती थी, और समझती थी, शान्तिका विध्वंसक। इसीलिये वह डीवेलरासे अधिक सावधान रहती थी, अधिक चौंकती रहती थी। वह जिस कारागारमें बन्द करके रक्खा गया था, उसपर दिन-रात

कड़ा पहरा पड़ा करता था। वह किसीसे मिलने भी न पाता था। दूसरोंसे कौन कहे, नौ महीनेतक वह अपनी स्त्रीसे भी न मिल सका। कष्टोंका अन्त नहीं, विपत्तियोंकी सीमा नहीं, किन्तु फिर भी उसका साहस कम न हुआ, वह पुरुषार्थकी ज्योति मन्द न पड़ी। कारागारकी एकान्त कोठरीमें भी वह बराबर अपने पुरुषार्थ और जीवनकी ज्योति जलाता रहा। उसी 'ज्योति' के प्रकाशमें तो एक दिन वह अँगरेज़ी सरकारके सिपाहियोंसे घिरे हुये जेलसे निकल भागा, और ऐसा निकल भागा, कि लाख प्रयत्न करनेपर भी फिर अँगरेजी सरकार उसे न पा सकी, न पकड़ सकी।

डीवेलराके अँगरेज़ी सरकारकी जेलसे निकल जानेके समाचारने सारे संसारमें तहलका-सा मचा दिया। संसारके सभी बड़े-बड़े राष्ट्रोंके ध्यानको इस पुरुषार्थीने एक साथ ही आयरलैण्डकी ओर आकर्षित कर लिया। सभी डीवेलराके साहस, और आयरलैण्डमें छिटकी हुई जीवनकी ज्योतिको महत्त्व देने लगे, उसकी प्रशंसा करने लगे। डीवेलरा किस प्रकार अँगरेजी सरकारके बन्धनोंको तोड़कर निकल गया, इसके सम्बन्धमें लोगोंने अपने-अपने विचार भी प्रगट किये। एक पुस्तकमें डीवेलराके जेल-जीवन, और उससे निकल जानेकी कहानी इन शब्दोंमें दी हुई है:—

उसके जेलसे निकल जानेमे बहुत समय लगा, और बड़ा कष्ट भी हुआ। जिस जेलमे डीवेलरा बन्द था, उसपर बड़े

जोरोंकी निगरानी रहती थी। पहरा देनेवालोंमें जेल-जमादारोंके अतिरिक्त फौज़ी जमादार भी नियत थे। नौ महीने तक डीवेलराको किसीसे भी मिलने नहीं दिया गया। यहां-तक, कि वह अपनी स्त्रीसे भी नहीं मिलने पाया। किन्तु इतनी चौकसी होते हुये भी वह जेलसे निकल गया। उसने जेलके फाटककी कुँजीकी एक प्रतिकृति मोमपर ले ली। उस समय जेलोंमें यह आज्ञा थी, कि यदि क़ैदी चाहता तो अपने मित्रोंको हास्यपूर्ण सचित्र पोस्टकार्ड भेज सकता था। एक कार्ड-में एक शराबीका चित्र था, जो एक दरवाज़ेके तालेमें चाभी लगा रहा था, और उसके नीचे लिखा हुआ था, 'मैं भीतर नहीं जा सकता।' दूसरे कार्डमें एक मनुष्यका चित्र था, जो जेलके द्वारमें चाभी लगानेका प्रयत्न कर रहा था और उसके नीचे लिखा हुआ था, 'बाहर नहीं निकल सकता।' ब्रिटिश अधिकारियोंने दोनों पोस्टकार्डोंको बड़े ध्यानसे देखा, और उन्हें बड़ा अच्छा मजाक़ समझा। वे वास्तविक अर्थको न समझ सके। किन्तु ये दोनों पोस्टकार्ड बड़ी ही सावधानीके साथ बनाये गये थे। और उनका अभिप्राय ही कुछ और था। जिस चाभीका चित्र उनमें था, वह जेलकी चाभीकी बिलकुल नक़ल थी।

'क़ैदियोंको दो कठिनाइयोंका सामना करना था। एक तो यह कि वे अपने सन्देशका अर्थ अपने आयरिश मित्रोंको समझा सकें। दूसरे यह, कि उनके सन्देशका अर्थ इतना

साफ़ भी न हो, कि ब्रिटिश अधिकारी उसे समझ जायें। आशा केवल इस बात पर थी, कि कुछ अधिकारी वड़े अल्प बुद्धिके थे। और वे असली संकेत समझनेमें बिलकुल असमर्थ रहे। यद्यपि अँगरेजोंने इन पोस्टकार्डोंको एक सुन्दर मज़ाकके अतिरिक्त और कुछ नहीं समझा, किन्तु आयरलैंडमें इस सन्देशका अभिप्राय शीघ्र ही समझ लिया गया, और शीघ्र एक, 'मास्टर' की या 'सरदार कुंजी' अर्थात् ऐसी चाभी, जो बहुत से तालोंमे लग सके, बना ली गई। इस चाभीको एक रोटीके भीतर पकाते ही समय भरकर जेलमें किसी तिकड़मसे भेज दिया गया। दो व्यक्ति एक मोटर लेकर नियत स्थानपर ठीक समय से पहुँच गये, उसी कुंजीकी सहायता से डीवेलरा और उसके साथी जेलके पिछले दरवाज़ेसे निकल आये, और सबके सब शीघ्रताके साथ नियत स्थानपर पहुँच गये।"

अङ्गरेज़ी सरकारकी जेलसे निकल जाना और निकलकर अपनेको बचा लेना डीवेलरा ही ऐसे पुरुषार्थियोंका काम है। उसका यह साहस आगसे खेलना था, जान-बूझकर मृत्युको आलिंगन करना था। यदि वह जेलसे निकलते समय पकड़ लिया जाता, या जेलसे निकल जानेका षडयंत्र किसी पर विदित हो जाता, तो कौन कह सकता है, कि उसे कौन सी यातना न दी जाती। किन्तु वह तो अपनी मातृ-भूमिके लिये, अपने देशके लिये, और अपने देशके पीड़ित मनुष्योंके

लिये सब कुछ सहनेको तैयार था। वह जेलसे निकलकर अमेरिका गया। अमेरिकामें उसका, खूब स्वागत हुआ खूब सम्मान हुआ। उसने अपने साहससे, अपनी शक्तिसे और अपने पुरुषार्थसे अमेरिकाके कोने-कोनेमें आयरलैण्डके प्रति एक गहरी सहानुभूतिकी भावना उत्पन्नकर दीं। ऐसी भावना उत्पन्न कर दी, कि उसे देखकर अङ्गरेज़ी सरकार काँप उठी, भयभीत हो गई।

अङ्गरेज़ी सरकार डीवेलराके प्रयत्नोंको कुचलनेका प्रयास करती ही रह गई, किन्तु वह आगे बढ़ गया, बहुत आगे। अङ्गरेज़ी सरकारकी विशाल सेना, उसकी बड़ी-बड़ी तोपें, और उसके बड़े-बड़े वायुयान रक्खे ही रह गये, और डीवे-लरा अपने सच्चे देशके साथ स्वाधीनताके मैदानमें निकल गया। वह एक सच्चे पुरुषार्थी ही की भाँति अङ्गरेज़ी सर-कारके जालोंको छिन्न-भिन्न करता था, वह एक अदम्य साहसीको भाँति प्रतिक्षण विपत्तियोंकी गोदमें कूदनेके लिये तैयार रहता था, और वह एक सच्चे देश-प्रेमीकी भाँति अपने प्राणोंको देश-सेवाकी वेदिकापर लुटानेके लिये उद्यत रहता था। उसीके महान त्यागसे, उसीके महापुरुषार्थसे और उसीकी साहस शक्तिसे तो आज आयरलैण्ड गौरववान है, धनी है। और है स्वाधीनताके वैभव-सुखोंका उपभोग करने वाला! धन्य है डीवेलरा, और धन्य है, उसका महा पुरुषार्थ! उसने समस्त आयरिश जातिको अन्धकारके गह्वर

से निकाला, उसे स्वाधीनताके सुनहले संसारमें पहुँचाया! उसके इस महान् पुरुषार्थकी झलक एक अमेरिकन पादरीके निम्नोकित शब्दोंमें वहुत कुछ मिल जाती है :—

'डीवेलराने अपना जीवन आयरलैण्डके लिये अर्पित कर दिया है। डवलिनमें उसने शत्रु का सामना किया. ईस्टरकी क्रांतिके समय आत्म-समर्पण करने वाले वागी सैनिकोंमें वह अन्तिम कमाण्डर था। उसे फांसीकी सजा मिली थी। वह अङ्गरेजी जेलोंमें सड़ा है। वहांसे निकलकर भागने में उसने अपनी जान जोखिममें डाली है और वह बदला लेने वाले अङ्गरेजी न्यायसे बराबर बचता रहा है। यदि समय आया, और आवश्यकता हुई तो सोती हुई देश भक्ति और संसारकी प्रजातंत्रीय आत्माको जगानेके लिये वह अपना रक्त वहानेमें संसारके त्यागियोंमें सर्व प्रथम स्थान प्राप्त करेगा।'

'अत्यन्त उत्साह पूर्ण होनेपर भी आयरलैण्डकी स्वतंत्रता प्राप्त करनेमें डीवेलरा शान्त ओर स्थिर है, इङ्गलैण्डके प्रति उसके मनमे कोई घृणाका भाव नहीं है। वह अवहेलना और विरोधसे विलकुल नहीं घवड़ाता। वह एक आदर्शवादी है, जो अपने आदर्शकी न्याय-प्रियता और सुन्दरता से जगमगाया करता है। उसे विश्वास है, कि अन्तमें मनुष्य मात्र उसके स्वप्नोंका दृश्य देखेंगे। साथ ही वह उनकी हिचकिचाहट को देखकर असन्तुष्ट नहीं होता और न अप्रसन्न होता है, किन्तु उन तक प्रकाश पहुँचाने और उन्हें अपनी ओर लानेके

व्यवहारिक कार्यमें अथक परिश्रम करता रहता है।

"महापुरुषोंका विशेष गुण सरलता और उनका मिष्ट भाषण है। मानुषिक आदर्श, अध्यात्मिक वास्तविकता, साहस, दार्शनिकता, अदम्य उत्साह और प्राचीन स्वप्न कदाचित् ही कभी किसी एक मनुष्यमें ऐसे प्रेमसे घुलेमिले हों, जैसे कि ईमन डीवेलरामें पाये जाते हैं। वह इन सभी गुणोंकी जीवित मूर्ति है।"

५

आयरलैण्डकी स्वाधीनताके लिये वह एक विघातक युग था, नाश कारी समय था। गृह-कलहकी विकराल लपट चारों ओरसे उठकर उसके स्वाधीनता-वैभवको धूलिमें मिलानेका प्रयत्नकर रही थीं! अङ्गरेज, आयरलैण्डको अपनी दासताकी जंजीरसे कसे रहने वाले अङ्गरेज, उन्हें बढ़ावा दे रहे थे, प्रोत्साहन दे रहे थे। देशकी स्वाधीनताके लिये युद्ध करने वालों में भी विरोध और मतभेदकी अग्नि उत्पन्न हो उठी थी। एक दल चाहता था, अङ्गरेजोंकी छत्रच्छायामें आयरलैण्डके जीवनको आगे बढ़ाना, और दूसरा चाहता था, आयरलैण्ड को पूर्ण रूपसे स्वतंत्र करना, उसे संसारमें सम्माननीय बनाना, इसी विरोध और मतभेदकी अग्नि चारों ओर उठ खड़ी हुई थी। स्वाधीनताके लिये कन्धेसे कन्धा लगाकर युद्ध करने वाले, आपसमें ही लड़कट रहे थे, एक दूसरेका रक्त बहा रहे थे।

डीवेलरा, महान् पुरुषार्थी, डीवेलरा इस दूसरे दलका नेता था। उसे स्वीकार नहीं था, कि अङ्गरेज़ उसके मानवी अधिकारोंमे हस्ताक्षेप करें, उसके देशको अपने कौड़ेसे शासित करें, वह अपने देशका शासन अपने देशवासियोंके हाथोंमें देना चाहता था। वह चाहता था, कि आयरिश जातिकी संसारमें मनुष्योंकी जाति बने, उसे भी वे अधिकार प्राप्त हों, जो संसारके अन्यान्य स्वाधीन देशोंमे मनुष्योंको प्राप्त हैं। इसीलिये वह अङ्गरेज़ी सरकारसे लड़ रहा था, और लड़ रहा था, अपने देशके अपने ही भाइयोंसे, उसके लिये अधिक संकटका समय था, अधिक विपत्तिका युग था। एक ओर अङ्गरेज़ी सरकार थी, और दूसरी ओर थे वे, जो अङ्गरेज़ी सरकारकी छत्रच्छायामें देशका शासनकर रहे थे। इन्हीं दोनों शक्तियों के बीचमें डीवेलरा अपने कुछ साथियोंके साथ पूर्ण स्वाधीनता का राग अलाप रहा था, अपनी मातृभूमिको स्वाधीनता के सुनहले संसारमें ले जानेका प्रयत्नकर रहा था।

पग-पगपर विपत्तियाँ थीं, पग-पगपर बाधायें थीं। पासमें संगठित सेना नहीं, अस्त्र-सस्त्रोंके सुचारु साधन नहीं। अपने भी पराये हो रहे थे, प्राणोंके घातक बन रहे थे। किन्तु उस महान् पुरुषार्थीके लिये जैसे यह सब कुछ नहीं था। वह हार जानेपर भी पराजय स्वीकार न करता, वह निराशाकी भयानक परिस्थितियोंमें भी निराश न होता। निराशाके सघन अन्धारमें भी उसके हृदयमे आशाकी ज्योति चमकती

रहती; विपत्तियोंकी काँटेदार झाड़ियोंमें भी उसकी आकृतिपर साहसका प्रकाश जगमगाता रहता। आगे बढ़नेके अतिरिक्त वह कुछ जानता ही न था। वह बराबर आगे बढ़ता गया। उसकी प्रगतिको देखकर शत्रु भी विकम्पित हो उठे। उसने अपनी आँधीकी सी प्रचण्ड गतिसे विरोधको पीस दिया, गृह-कलहको दबा दिया, और आयरलैण्डको पहुँचा दिया, स्वाधीनता के सुनहले संसारमें। आज आयरलैण्ड उसीकी शक्तिसे धन्य बन गया है, उसीके पौरुषसे जगमगा उठा है। आयरलैण्डके घर-घरमें, आयरिश जातिके प्रत्येक मनुष्यके हृदयमें आज उसके महान् पुरुषार्थोंका गुण गान हो रहा है। वह इस समय आयरलैण्डका सर्वस्व है, और उसकी सेवामें इस समय भी एक सच्चे पुरुषार्थीकी भाँति अपने रक्तको सुखा रहा है, अपने जीवनका उत्सर्गकर रहा है। धन्य है आयरलैण्ड और धन्य है आयरिश जाति! उसने डीवेलरा ऐसे महान् पुरुषार्थीको जन्म देकर अपनेको संसारमें अधिक-धन्य बना लिया है।

सनयातसेन

१

चीनियोंके जीवनमें जागृतिका प्रकाश दौड़ानेवाला वह युवक। वही, जिसे सारा संसार डाक्टर सनयात सेनके नामसे जानता है, और जिसने चीनके पीड़ित मानव-समुदायके लिये मृत्युकी भी उपेक्षाकी थी, भयंकरसे भयंकर आपदाओंको भी अपनी चिरसंगिनी बना लिया था। वह जीवन और जागृतिकी मूर्त्ति था। उसके विशाल हृदयमे प्रतिक्षण पुरुषार्थ की ज्योति हँसती रहती थी। वह अपने पुरुषार्थके सम्मुख, अपनी साहस-शक्तिके आगे बड़ी-बड़ी कठिनाइयोंको भी लघु तिनके के सदृश अस्तित्वहीन समझता था। उसके हृदय

में मानवी-देवता था। वह गरीबोंका साथी, पद दलितोंका आश्रय और अपने देशका प्राण था। किन्तु अभी उसे कोई न जानता था, अभी वह उग रहा था, साहस-शक्तिकी सुनहली प्रभाके साथ प्राचीकी गोदमें उदय हो रहा था। किन्तु वह सब कुछ जानता था, सब कुछ अपने हृदयकी आँखोंसे देख रहा था--चीनियोंके जीवनका पतन, उनके मानवी अधिकारोंका सर्वनाश और उनका करुण क्रन्दन! ये सब एक साथ ही उसके हृदयमें उतरकर उसके जीवनको एक अपूर्व सांचेमें ढाल रहे थे। वह इन्हींकी प्रेरणासे धीरे-धीरे एक अपूर्व-लोककी ओर आकर्षित हो रहा था। ऐसे लोककी ओर आकर्षित हो रहा था, जहाँ पहुँचकर लोग अपनेपनको भूल जाते हैं, और दूसरोंके कल्याणकी वेदिकापर अपने सम्पूर्ण अस्तित्वको उत्सर्ग कर देते हैं।

वह १८८४ ई० का समय था। डाक्टर सनयात सेन उन दिनों एक अस्पतालमें कामकर रहे थे। उनके युवक-हृदयमें सेवाकी बड़ी लगन थी! गरीबों और आश्रयहीनोंकी सेवा के सन्मुख वे अपने जीवनको भी भूल जाते थे, और भूल जाते थे, अपने जीवनको आवश्यकताओंको! उनकी उस सेवा-वृत्तिको देखकर उनके साथियोंको भी अधिक आश्चर्य होता था। आपत्तियों और विपत्तिकी गोदमें भी वे सेवाके लिये एक सच्चे पुरुषार्थीकी भांति कूद पड़ते थे। उनके युवक-जीवन का उद्देश्य ही था, दूसरोंका कल्याण करना, दूसरोंके कल्याण

के लिये अपने आपको मिटाना ! युवक-जीवनमें ऐसा अलौकिक त्याग बहुत कम देशोंके किसी-किसी युवकमे दिखाई देता है। जिसमे दिखाई देता है, वह फिर डाक्टर सनयात सेन ही की भांति जीवनके मैदानमें विजयी होता है, और महा विजयी !

उन दिनोंके हांगकागका वह जीवन ! प्लेग और महामारी दोनों एक साथ मिलकर ताण्डव-नृत्य कर रहे थे। दोनोंके इस भयानक ताण्डव-नृत्यमे किसी जीवनका कुछ मूल्य ही न था। प्रतिदिन लोग सैकड़ोंकी संख्यामे मृत्युकी वेदिकापर चढ़ रहे थे। जिसे आज देखा, उसे कल नहीं। जिसे अभी देखा, उसे थोड़ी देरके पश्चात् नहीं। विकट था, मृत्युका वह अभिनय! समस्त हागकांगमे एक भयंकर कुहराम सा मच गया था। लोगोंको अपने-अपने प्राणोंकी पड़ी थी। फिर कौन सुनता है, किसी की, कौन देखता है, किसीको ! मृत्युकी इस भयानक आंधीमे घरसे बाहर निकलनेका किसीमे साहस ही न होता था। सब मृत्युकी विभीपिकासे भयभीत होकर अपने-अपने घरोंके भीतर दुबककर वैठे हुए थे।

किन्तु उस युवकको अपने प्राणोंकी चिन्ता नहीं थी। उसी युवकको, डाक्टर सनयातसेनको। वे अपने साथियोंके एक दलके साथ निर्भयता पूर्वक हांगकांगकी गलियोंमे विचरण किया करते थे, दुखियोंकी सेवाके लिये, पीड़ितोंकी सहायताके लिये। वे जान बूझकर, बिलकुल सोच-समझकर प्लेग और

महामारीके रोगियोंके पास चले जाते, और उनकी सेवा सु-श्रुषा करते, उन्हें सुखके साथ ही साथ सान्त्वना प्रदान करते। उनका और उनके साथियोंका वह साहस! मानों वे पागल युवक अपनी सेवाकी शक्तिसे महामृत्युको भी लड़नेके लिये ललकार रहे हों? मानों मृत्यु भी उनके पुरुषार्थको देखकर उनसे पनाह मांग रही हो। जहां हांगकांगमें सैकड़ों मनुष्य प्रतिदिन इन संक्रामक रोगोंकी भेट चढ़ रहे थे, वहां यह चीनी युवक अपने कुछ साथियोंके साथ लोगोंको मृत्युके मुखमें से निकालनेका सहल प्रयत्न कर रहा था। उसका वह साहस, उसका वह पुरुषार्थ, धन्य है, आदर्शनीय है। पददलित जातियोंका ऐसे ही पुरुषार्थी नवयुवक सुन्दर भाग्य-निर्माण करते हैं। और, भाग्य-निर्माण करते हैं, डाक्टर सनयात सेन ही के सदृश! डाक्टर सनयात सेनने अपने इसी पुरुषार्थकी महान् शक्तिसे चीनियोंको अन्धकारके गह्वरसे निकालकर जीवन के आलोकमें पहुँचा दिया, और उन्हें बना दिया, संसारमें धन्य। आज उन्हींकी शक्तिसे, उन्हींके पुरुषार्थसे चीनी अपने सुखोंका उपभोग कर रहे हैं, अपनी स्वाधीनताका दर्शनकर रहे हैं।

२

चीनकी स्वाधीनताके अनन्य पुजारी डाक्टर सनयात सेन। उनकी रगोंमें पुरुषार्थ था, उनके हृदयमें जीवनकी ज्योति थी। वे अपने इसी पुरुषार्थ, और अपनी इसी जीवन-

ज्योतिको लेकर उस भयानक अन्धकारकी ओर बढ़े जा रहे थे, जहाँ बैठकर मंचू-सम्राट अपने अत्याचारकी ज्वाला जला रहा था, और कर रहा था, चीनियोंका सर्वनाश ! डाक्टर सेनसे अपने देशवासियोंका यह सर्वनाश न देखा गया। उनके अन्तरका कोना-कोना करुण-चीत्कारसे, पद-दलितोकी पुकारसे मथ उठा, विदीर्ण हो उठा। वे उसी पुकार और उसी चित्कारको सुनकर पुरुषार्थीकी भाँति दलितोंकी सेवाके लिये मैदानमे कूद पड़े थे। पग-पगपर झाड़ियाँ थीं, पग-पगपर काँटे थे। पददलितोंकी सेनाके लिये घरसे निकलनेवालोंको मंचू-सम्राटकी ओरसे कारागारकी कोठरी, और शूलीकी शैय्या निर्मित थी, किन्तु फिर भी वह सुवह अपने घरसे निकल पड़ा, और निकल पड़ा, अपने देशवासियोंकी सेवाके लिये, पीड़ित मानव समुदायकी सुख-सम्वर्द्धनाके लिये !

चारों ओर चीनमे अत्याचारकी ज्वाला जल रही थी। कोने-कोनेसे उसमें विदग्ध होनेवालोंके करुण-क्रन्दन सुनाई दे रहे थे। साथ ही जलनेवाले, और मरनेवाले लगा रहे थे, मंचू सम्राटके सर्वनाशकी आवाजें ! उन्हीं आवाजोंपर, और उन्हीं पुकारोंपर तो उसने अपनेको लुटा दिया, अपने जीवनका उत्सर्ग कर दिया ? उसीने, उसी महापुरुष डाक्टर सनयात सेनने। वे अपने कुछ साथियोंको संगठित करने, उनमें जीवन और जागृति का मंत्र फूंककर करने लगे मंचू-शासनके सर्वनाशकी तैयारी ! स्थान स्थानसे उसे जलानेके लिये विद्रोहकी लपटें उठने लगीं,

जगह जगहसे उसके सर्वनाशकी चिनगारियाँ उठने लगीं। किंतु इतनी शीघ्रतासे तो पापीके जीवनका अन्त हो नहीं जाता, उसके अत्याचार की जलती हुई ज्वाला शांत नहीं हो जाती! पापियों के सर्वनाशके लिये तो चाहिये बलिदान और चाहिये उनकी अत्याचारकी ज्वालाको शांत करनेके लिये देश-सेवियोंका रक्त-पात! उसीकी पूर्तिके लिये तो मंचू-सरकारकी अत्याचार-ज्वाला बढ़ती जा रही थी, और उसमें देश-सेवी पातंगेकी भाँति कूदने जा रहे थे।

कैन्टनमें विद्रोहकी अग्नि जलानेका डाक्टर सेनका वह सुदृढ़ प्रयास मृत्युसे खेलना था, अपने प्राणोंकी बाजी लगाना था, एक ओर थी विशाल सेना, सुदृढ़ अधिकार शक्ति, और दूसरी ओर इनके पास थे, कुछ थोड़ेसे आदमी। ऐसे आदमी, जो देशकी सेवाके लिये हथेलीपर सिर लेकर घूमा करते थे, जो पीड़ितोंके कल्याणके लिये प्रतिक्षण अपने प्राणोंकी बाजी लगाये रहते थे। इन्हीं पागलोंकी शक्तिसे डाक्टर सेन कैन्टनकी सरकारको उलट देना चाहते थे, और चाहते थे, उसे सर्वनाशकी आगमें मिला देना। किन्तु उनका प्रयत्न सफल न हुआ, उनकी कामना पूरी न हुई। विद्रोहकी अग्नि प्रज्वलित होनेसे ही सभी देशके दीवाने, डाक्टर सेन के सभी साथी गिरफ्तार कर लिये गये। किसीको कारागारकी अन्धकारपूर्ण कोठरी मिली, कोई निर्वासित कर दिया गया। और कोई चढ़ा दिया गया, फांसीके तख्तेपर। किन्तु डाक्टर

सेन बचकर निकल गये। लाख प्रयत्न करनेपर भी उन्हें मंचू सरकार न पा सकी,अपने अत्याचारकी भाड़ीमें न झोंक सकी। इसलिये न झोंक सकी कि चीनके पीड़ित मनुष्योंको इनकी आवश्यकता थी। यदि वे भी अपने साथियोंके साथ अत्याचारकी भेंट चढ़ जाते, तो फिर मंचू शासनका सर्वनाश कौन करता, चीनियोंको जीवनके आलोकमें कौन पहुंचाता ?

विपत्तियोंकी सीमा नहीं थी, कष्टोंका अन्त नहीं था। मंचू सरकारके अधिकारी चारों ओर जाल बिछाकर बैठे हुए थे। गुप्तचर दानेकी भांति बिखरे हुए थे। ऐसी अवस्थामें बचकर निकल जाना साधारण मनुष्योंका काम नहीं था। किन्तु उस व्यक्तिके लिये यह अधिक साधारण ही था, जिसे न प्राणोंकी आशा थी, न जीवनका मोह था ! जो भूखा प्यासा रहकरके भी देशकी सेवा करता था, जो देशकी सेवाके लिये झोपड़ोंमें भी अधिक प्रसन्नता प्रगट कर रहा था। उसकी शक्तिके आगे उसके महान पुरुषार्थके आगे यह क्या था, कुछ नहीं। डाक्टर सेन निकल गये, और निकल गये बड़ी वीरताके साथ। शिकारी जाल फैलाकर वैसेही रह गये और सिंह दहाड़ता हुआ उनके चंगुलसे निकल गया, उनकी शक्तिसे बाहर हो गया।

जाड़ेके दिन थे। अंधेरी रात थी। आकाशमें तारे झिलमिला रहे थे। डाक्टर सेन इन्हीं तारोंके प्रकाशमें एक नहरके किनारे-किनारे चले जा रहे थे। शीतसे शरीर सिकुड़ा जा रहा था, दांत बज रहे थे। किन्तु फिर भी वे साहसके साथ आगे

चले जा रहे थे। खाने-पीनेकी सुविधा नहीं, रहनेका आश्रय नहीं। सम्राटका दण्ड प्रतिक्षण सिरपर घूमता रहता था। कभी नावपर बैठते, तो कभी पैदल चलते। सामने विपत्तियाँ थीं, आपदाओंका पहाड़ था। किन्तु उस महान पुरुषार्थीके लिये जैसे कुछ नहीं था। शायद ही कभी ठीकसे भोजन मिल पाता हो, शायद ही कभी रहनेके लिये सुविधापूर्ण स्थान प्राप्त होता हो। आज यहां हैं,तो कल वहां। किन्तु फिर भी वह महान पुरुषार्थी निराश न हुआ। फिर भी वह साहस-शक्तिके साथ अपने पथ पर आगे बढ़ता ही बढ़ता गया। धन्य था, उसका वह साहस, और धन्य था, उसका वह पुरुषार्थ। ऐसे साहस और ऐसे पुरुषार्थका दर्शन जगतके विरले ही मनुष्योंमें हुआ करता है।

३

चीनका वह तपस्वी युवक, वही डाक्टर सेन, जिसने अपने पुरुषार्थकी ज्योतिसे चीनको आलोकित कर दिया है, उसे संसारमें गौरववान् बना दिया है। उन दिनों वह एक तपस्वी की भांति ही कष्टोंकी शय्या पर सोता था, विपत्तियोंकी झाड़ी में विचरण किया करता था। मंचू-सम्राट उसे पकड़ कर सर्वनाशकी अग्निमें झोंक देना चाहता था, किन्तु वह अपने देशके लिये, अपने देशके पीड़ित मनुष्योंकी सेवाके लिये बचा रहना चाहता था। इसीलिये वह कारागारमें न जाकर, फांसीके तख्ते पर न चढ़कर विपत्तियोंकी झाड़ीमें घूम रहा था, कांटोंके पथ पर चल रहा था। उसे अपने देशकी चिन्ता थी। देशकी

पीड़ाने उसे अधिक पीड़ित बना दिया था। वह देशकी पीड़ा को दूर करनेके लिये हँस-हँस कर विपत्तियोंका आलिंगन कर रहा था, आपदाओंको चूम रहा था।

डाक्टर सेन कष्टोंके पथ पर दिनरात चल कर, अधिकारियोंकी आँखोंसे अपनेको बचा कर उन दिनों न्यूयार्ककी गलियोंमें भटक रहे थे। न किसीसे परिचय था, न किसीसे मेल-मिलाप था, पासमें रुपये-पैसेकी भी कमी थी। न ठीकसे कहीं आश्रय मिल पाता था और न कभी निश्चिन्तताका भोजन! मंचू-सरकारके शासनाधिकारी वहां भी उनके पीछे हाथ धोकर पड़े हुए थे। गुप्तचर सदैव उनकी ताकमें रहा करते थे। कभी-कभी उन्हें बना-बनाया भोजन भी छोड़ देना पड़ता था। कई-कई दिन बीत जाते थे, किन्तु निश्चिन्तताके साथ भोजन करनेका समय न मिलता था। उनका वह अनिश्चित जीवन, उनके जीवनकी वह विषम परिस्थिति! आज उसे पुस्तकोंके पन्नोंमें पढ़कर ही हृदय व्याकुल हो जाता है, भयभीत हो उठता है। किन्तु उस महापुरुषके लिये, जीवन और जागृतिके उस सजीव पुतलेके लिये, वह कुछ नहीं था। वह उसे एक लघु तिनकेके सदृश तोड़ता हुआ आगे बढ़ रहा था। मंचू-सरकार द्वारा बिछाये गये जालोंको छिन्न-भिन्न करता हुआ वह स्वाधीनताकी ओर दौड़ा जा रहा था और शासनाधिकारी आश्चर्यसे उसकी प्रगतिको निहार रहे थे।

एक अमेरिकन लेखकने डाक्टर सनयात सेनके उस अनि-

श्चित जीवनका जो चित्र खींचा है, वह अधिक करुणाजनक होते हुए भी स्वाधीनता-प्रेमियोंके लिये बड़ा ही जीवनप्रद है। देखिये—"डाक्टर सनयात सेन जिन दिनों न्यूयार्कमें रहते थे, उनका जीवन बड़ा ही संकटपूर्ण था, बड़ा ही विपद्ग्रस्त था। अपरिचित न्यूयार्ककी गलियोंमें वे एक श्रमिककी भाँति घूमा करते थे। पासमें रुपये-पैसेका साधन भी अधिक नहीं था। किसीसे विशेष जान पहचान भी नहीं थी। न भोजनका अवलम्ब था और न रहनेके लिये उचित स्थान। इन समस्त आपदाओंके ऊपर एक और भी बहुत बड़ी आपदा थी और वह थी, गिरफ्तार हो जानेकी आशंका! न्यूयार्कमें भी मंचू-सम्राटके शासनाधिकारी उनकी गिरफ्तारीके लिये जाल बिछाये हुए थे। किन्तु लाख चेष्टा करने पर भी वे न्यूयार्कमें उन्हें बन्दी न बना सके। डाक्टर सेन अपनी शक्ति और अपनी बुद्धिसे शासनाधिकारियोंके प्रत्येक प्रयासको विफल कर दिया करते थे। वे बिलकुल सामनेसे अधिकारियोंकी आँखोंमें धूल झोंक कर निकल जाते थे। अधिकारी यदि डाल-डाल चलते थे, तो वे भूखा-प्यासा रहने पर भी पात-पातकी उड़ान मारते थे।"

अद्भुत था, उनका वह साहस और अद्भुत था, उनका वह पुरुषार्थ! विपत्तियों और आपदाओंकी इस भयानक झाड़ीमें भी वे साहसकी मूर्ति बने हुए दिखाई देते थे। परि-स्थतियोंके कर्कश आघात-प्रतिघातमें भी वे हँसते-मुसकुराते

हुए आगे बढ़े जा रहे थे। न्यूयार्कमें जब उनका रहना अत्यन्त कठिन होगया, तब वे लन्दन चले गये। लन्दनमें भी उनकी विपत्तियोंकी सीमा नहीं थी, उनके कष्टोंका अन्त नहीं था। वहाँ भी मंचू-सरकार उनके पीछे हाथ धोकर पड़ी हुई थी। अन्तमें एक दिन डाक्टर सेन गिरफ्तार कर लिये गये। किन्तु फिर भी मंचू-सरकारकी इच्छा न पूरी हुई, वह इनके रक्तसे अपने अत्याचारी हाथोंको न रंग सकी। थे अपने एक साथी की सहायतासे लन्दनमें ही मुक्त कर दिये गये और फिर विपत्तियोंका सामना करते हुए अपने लक्ष्यकी ओर अग्रसर होने लगे। उनकी वह कार्य-संलग्नता, उनका वह कष्ट-सहन और उनका वह अलौकिक त्याग !! उसीने तो उन्हें स्वाधीनताके आँगनमे पहुँचा दिया। मंचू-सरकारकी उच्छृङ्खलताका सदाके लिये सर्वान्त कर दिया। धन्य हैं वे, और धन्य था, उनका वह पुरुषार्थ !

४

चीनका वह युग ! अत्याचार और अशिक्षाका युग था। एक ओर मंचू-शासनाधिकारी अत्यचारोंकी अग्नि जलाकर मानवताका सर्वनाश कर रहे थे और दूसरी ओर अशिक्षाका दानव लोगोंका बरबस गला घोंटनेमे लगा हुआ था। दोनों का एक साथ था, पारस्परिक सहयोग था। दोनों मिलकर चीनका सर्वनाश कर रहे थे। चीनियोंको महापतनके सागर में ढकेल रहे थे। जो अशिक्षाके दानवका अन्त करनेके लिये

संकल्प करता, जो सुधारोंके लिये आवाज़ लगाता, उसे मंचू-सरकार फांसीके तख्ते पर चढ़ा देती थी, सर्वनाशकी शय्या पर सुला देती थी। अशिक्षाकी रक्षाके लिये, पापको बचानेके लिये, चारों ओर जाल फैले हुए थे। जाल फैले हुए थे, इसलिये कि अशिक्षाका गला घोंटनेवाले, पापोंके सर्वान्त की चेष्टा करनेवाले, स्वयं इन जालोंमें फँस जायँ और स्वयं उनकी भट चढ़ जायँ! किन्तु फिर भी कुछ लोग ऐसे थे, जो अशिक्षाका गला घोंट रहे थे और गला घोंट रहे थे अशिक्षा का पालन करनेयाले मंचू-शासनका। इनमें हमारे डाक्टर सनयात सेन सबके नेता थे, सबके प्रमुख सेनापति थे। वे विपत्तियोंकी झाड़ीमें कूद-कूद करके मंचू-शासनको विध्वंस करनेका प्रयत्न कर रहे थे, वे विदेशोंकी गलियोंमें भटक-भटक करके चीनमें जीवन और जागृतिका प्रकाश दौड़ानेका प्रयत्न कर रहे थे। वे निर्भयता-पूर्वक चीनके गांवोंमें चले जाते, किसानोंसे बातचीत करते और उनके हृदयमें बैठे हुए अशिक्षाके दानवको मारनेका प्रयत्न करते। प्रयत्न करते, ऐसी स्थितिमें जब मंचू-सरकारके गुप्तचर उनके पीछे छायाकी भाँति घूमते रहते थे। और, जब मंचू-सम्राटकी ओरसे उनके सिरके लिये पांच सहस्र डालरके पुरस्कारकी घोषणा की गई थी।

वह एक रात थी, भयानक रात थी। डाक्टर सेन एक नावमें पुआल पर बैठे हुए थे। वे चिन्तित थे, अपने देशके लिये, अपने देशके पीड़ित मनुष्योंके लिये। रह-रहकर अनेक

विचारधारायें उठतीं थीं और वज्रसे भी अधिक कठोर अन्त-स्तलसे टकराकर विलीन हो जाती थीं। इसी समय नावपर बनी हुई झोपड़ीमें एक मनुष्यने प्रवेश किया। उसने डाक्टर सेनसे कहा, 'आपको गिरफ्तार करवा देने पर मुझे पांच सहस्त्र डालरका पुरस्कार मिलेगा। इसलिये मैं आपको गिरफ्तार करता हूं!' उसकी बात सुनकर डा० सेन हंस पड़े और हंस पडे, एक वीरकी भांति। भयानकसे भयानक विपत्तियोंसे टक्कर लेने वाले उनके हृदयमें तनिक भीं व्याकुलता उत्पन्न न हुई। वे बड़े ही प्रेमके साथ हंस-हंसकर उस मनुष्यसे बातें करने लगे। डा० सेनकी बातोंमें अपूर्व त्यागकी शक्ति थी, अपूर्व जीवनकी ज्योति थी! वह मनुष्य, वही जो दुराचार का अभिनय करने चला था, जो स्वार्थकी अग्निमें त्याग-देव-ताको झोंकनेका दुस्साहस कर रहा था, त्यागकी अपूर्व ज्यो-तिको देखकर आश्चर्य-चकित हो उठा। उसकी आंखोंने पश्चा-त्तापके आँसू उगल दिये, उसका गला रुद्ध हो उठा और उसने आंसुओंसे लदे हुए अपने नेत्रोंके जहाजको डा० सेनके चरणों पर पटक दिया। धन्य थी, डा० सेनकी वह वाणी! जिसने राक्षसको भी देवता बना दिया, जीवनके लोकमें पहुंचा दिया। ऐसी मुग्धमयी वाणी वाले महापुरुष संसारमें बहुत कम दृष्टिगोचर होते हैं।

डा० सेनकी वाणीमें एक अपूर्व ज्योति है, एक अपूर्व जीवन है। उनके पुरुषार्थने, उनके साहसने, उनके रग-रगमें मानवी-

प्रेमका संचार कर दिया है। प्राणलेवा शत्रुओंको भी उनकी वाणी प्रेमको जंजीरसे कसकर बाँध लेती है, भयानकसे भयानक प्रतिद्वन्द्वी भी उनकी ओर आकृष्ट हुए बिना नहीं रहता। जब वे अपने पुरुषार्थके साथ जीवनके इन अमूल्य वैभवोंको लेकर चलते हैं, तब कठिनसे कठिन विपत्तियां भी उनका पथ छोड़ देती हैं और वे हँसते,मुसुकुराते हुए आगे निकल जाते हैं। कैन्टनकी बात है। डा० सेन शहरमें सुविधाजनक स्थान न मिलनेके कारण एक मछुएके घरमें टिके हुए थे। अधिकारियोंको कहींसे खबर मिल गई। बस फिर क्या? सिपाहियोंकी एक छोटी सी टुकड़ी भेज दी गई और उसे यह आदेश दे दिया गया, कि डा० सेन कहीं भी दिखाई पड़ें, दूरहीसे उन्हें गोली मार दो। गोली मारनेकी आज्ञा इसलिये दी गई थी, कि डा० सेनको गिरफ्तार करनेवाले उनके पास जानेपर स्वयं ही गिरफ्तार हो जाते थे। डा० सेनकी त्यागमयी वाणी उनके हृदयमें मानवताकी ऐसी ज्योति बिखेरती थी कि गिरफ्तार करनेको कौन कहे, रोने लगते थे, पश्चात्ताप प्रकट करने लगते थे। किन्तु गोलीसे उड़ा देनेवाली सरकारकी वह इच्छा भी न पूरी हुई और वह पुरुषार्थी सिंह दहाड़ता हुआ मैदानमें आगे निकल गया।

इसी प्रकार कैन्टनकी ही एक दूसरी घटना है। डा० सेन एक मकानमें ठहरे हुए थे। वे कुछ लिख रहे थे। अधिकारियोंको कहींसे पता लग गया और सिपाही धड़धड़ाते हुए

उनके कमरेमें आ पहुचे। सामने विपत्तिका समुद्र, मृत्युकी विभीषिका! किन्तु वह महान् पुरुषार्थी तनिक भी विचलित न हुआ, उसके भालपर तनिक भी सिकुड़न न उत्पन्न हुई। डा० सेन एक पुस्तक उठाकर ज़ोर-ज़ोरसे उसके कुछ वाक्य पढ़ने लगे। वाक्योंको पढ़ लेनेके पश्चात् उनकी सिपाहियोंसे बातचीत आरंभ हुई। त्यागकी ज्योति फिर बिखरी और इस भांति बिखरी कि समस्त सिपाहियोंका हृदय दैवी-आलोकसे आलोकित हो उठा। सब अपने आप लौट गये। जान बूझ कर सोच-समझकर मृत्युकी भेंट चढ़ गये। किन्तु किसीने डा० सेनकी ओर हाथ न बढ़ाया। हाथ बढ़ानेको कौन कहे सबने हृदयसे उनका सम्मान किया और उनके लिये मृत्युका आलिंगन किया। धन्य थी त्यागकी वह वाणी और धन्य थी त्यागकी वह ज्योति! त्यागकी वह वाणी और जीवन की यह ज्योति डा० सेनमें कहांसे उत्पन्न हुई, इस सम्बन्धमे उनका एक चरित्र-लेखक लिखता है:-"कठोर शब्दोंकी तो बात ही दूर है, कठोर विचार तक उनके स्वभावके विरुद्ध हैं। अपने साथियों और पड़ोसियोंका उन्हें बहुत ध्यान रहता है। त्याग या निःस्वार्थताकी वे साक्षात् मूर्ति हैं। उनकी सच्चाई, सरलता, देशभक्ति और देशके लिये कठिनसे कठिन यंत्रणा और मृत्यु तक सहन करनेकी शक्तिने उन्हें चीनियोंका अधिक प्रेमपात्र बना दिया है। वे सताये गये, कैद हुए, अपमानित किये गये, उनके सिरके लिये पारितोषिक रखा गया और उन्हें

घरसे देशसे, तथा समाजसे हाथ धोना पड़ा। देश-विदेशमें अनेक कष्ट सहते हुए घूमना पड़ा। उन्हें संसारके किसी देश में, किसी कोनेमें ऐसा स्थान नहीं मिला, जहाँ वे निरापद रूप से कुछ दिनों तक रह सकें। किन्तु फिर भी वह महान् पुरुष आकुल न हुआ, अपने पथसे बालभर भी विचलित न हुआ।"

जिस मनुष्यके जीवनमें पुरुषार्थकी ज्योति हो, जिसने विपत्तियों-आपदाओंसे भाई-बहनका सा सम्बन्ध स्थापित कर लिया हो, फिर उसकी वाणीमें त्यागकी शक्ति क्यों न हो? फिर वह क्यों न पापियों, स्वार्थियों और दुराचारियोंके हृदय में बसे हुए अंधकारको चीर कर छिन्न-भिन्न कर दे! डा० सेनने यही किया, उनके पुरुपार्थने ऐसा ही अपूर्व चमत्कार दिखलाया! सचमुच वह चमत्कार ही था और था पुरुषार्थ का चमत्कार! उसी चमत्कारने विरोधियोंका मुँह बन्द किया, शत्रुओंके हाथोंमें हथकड़ियां डाल दीं और मंचू-शासन को सुला दिया सदाके लिये सर्वान्तकी गोदमें! आज चीन में जिस प्रजातंत्र-राज्यका पौदा लहलहा रहा है, वह भी उसी चमत्कारकी देन है, उसीका फल है।

५

वह क्रान्तिका युग था। चारों ओरसे क्रान्तिकी लाल-लाल लपटें उठ रही थीं। मंचू-शासनके अत्याचारोंने लोगोंके हृदयमें एक भयानक पीड़ा-सी उत्पन्न कर दी थी। बच्चे, बूढ़े, जवान, सभी शीघ्रसे शीघ्र मंचू-शासनको मुर्देकी भांति,

कब्र में गाड़ देना चाहते थे। लोगोंकी इसी आकांक्षाके परि·णाम स्वरूप चारों ओर विद्रोहकी अग्नि प्रज्वलित हो उठी। मंचू शासनके पापका घड़ा भर चुका था। उसकी घृणित ली-लाओंने ही उसे अधिक अशान्त बना दिया था। सेना, सिपाही, कर्मचारी सभीके हृदयमें विद्रोहकी भावनायें जागृत हो उठी थीं। सभी चाहते थे, मंचू-शासनका सर्वान्त! अतः विद्रोहकी अग्नि प्रज्वलित होते ही सबने उसमें आहुति-दान दिया, सबने उसकी लपटोंको ऊँचा उठानेका प्रयत्न किया। फिर क्या था? क्रान्तिकी लाल-लाल लपट भयानक स्वरूप धारण कर आगे बढ़ीं और उस समय तक बराबर आगे बढ़ती गयीं, जब तक कि मंचू-शासनका सर्वान्त नहीं हो गया। जब तक कि वह सर्वनाशकी धूलिमे नहीं मिल गया।

जिस समय चीनमें क्रान्तिकी चिनगारियां आगे बढ़ कर मंचू-शासनको सर्वनाशकी धूलिमें मिला रही थीं, उस समय डा० सेन लन्दनमें थे। वे एक भ्रमितकी भांति लन्दनकी ग-लियोंमें घूम रहे थे, घूम-घूमकर चीनमें होने वाली क्रान्तिको सफल बनानेका प्रयत्न करते थे। वे किसी एक विशेष स्थानमें नहीं रहते थे। बल्कि विपत्तियों और कष्टोंका आलिंगन करते हुए स्थान-स्थान पर विचरण किया करते थे। किन्तु फिर भी वे अपने एक मित्रके यहाँ कभी-कभी जाया करते थे। इन मित्रका नाम था, कैण्टली! इन्हींके यहां डा० सेनकी डाक आया करती थी। डा० सेनने उन्हें इस बातका अधि-कार भी दे रखा था कि वे उनकी डाक देख लिया करें और

अत्यन्त आवश्यक समाचारोंसे उन्हें सूचित कर दिया करें।

चीनके मंचूका शासन सर्वनाशके तट पर पहुँच चुका था। चारों ओरसे प्रजातंत्रकी सुनहली रश्मि फूट चुकी थी। इन्हीं दिनों डा० सेनके मित्र कैन्टलीको एक तार मिला। वह तार डा० सेनके नामका था। कैन्टलीने उस तारको खोला। किन्तु चीनी-भाषामें होनेके कारण वह तार उनकी समझमें न आया। उन्होंने उस तारको अपने पास रख लिया। डा० सेन कई दिनोंके बाद जब आये, तब कैन्टलीने वह तार उन्हें दिया। डा० सेनने उस तारको पढ़ कर उपेक्षाके साथ अपनी जेबमें रख लिया।

दूसरे दिन मिस कैण्टलीने डा० सेनसे तारकी चर्चा करते हुए पूछा,—'यदि तारमें कोई गुप्त सम्वाद न हो तो हम लोगों को भी बता दीजिये, कि उसमें क्या लिखा हुआ है?' डा० सेनने उपेक्षाके स्वरमें उत्तर दिया,—'क्या मैंने आपसे नहीं कहा, कि मुझसे प्रतिनिधि तंत्र राज्यका सभापति बननेके लिये पूछा गया है?'

डा० सेनकी इस उपेक्षाको देख कर मिस कैण्टलीको अधिक आश्चर्य हुआ। उन्होंने डा० सेनकी ओर देखकर कहा,—'अच्छा, यह तो बतलाइये कि आप उस पदको स्वीकार करेंगे या नहीं?'

डा० सेनने फिर उसी उपेक्षाके स्वरमें उत्तर दिया, 'हाँ, यदि कोई दूसरा व्यक्ति न मिला, तो उस समय तकके लिये,

जब तक कोई मिल न जाय, मैं उसे स्वीकार कर लूंगा।'

यह है डा० सनयात सेनका महान् त्याग! जिस पदकी प्राप्तिके लिये लोग एँड़ी-चोटीका पसीना एक किया करते हैं, और जिसके लिये लोग पानीकी भाँति वहाया करते हैं धन, उसीको डा० सनयात सेन ठुकरा रहे हैं, एक विशाल राष्ट्र के प्रजातंत्रीय शासनके सभापतित्वका पद! संसारकी दृष्टि में वह चाहे कितना ही मूल्यवान क्यों न हो, किन्तु डाक्टर सनयात सेन ऐसे महान् पुरुषार्थी उसे तुच्छ समझते हैं और अत्यन्त तुच्छ!

हिटलर

•••

१

आधुनिक संसारका महान व्यक्ति हिटलर ! वही हिटलर जिसकी एक-एक सांससे देश-प्रेमकी ज्वाला निकलती है और जिसकी गगन-विकम्पित गंभीर घोषणाको सुन कर एक बार संसारकी छाती भी दहल उठती है। आज वह महान है, महानसे महान है, किन्तु एक दिन अपने बचपनमें वह था, अनाथ, एक साधारण स्थितिके मनुष्यका लड़का ! जिस दिन आजकी दुनियांका महान हिटलर ब्रौनोकी सरायमें पैदा हुआ था, कौन जानता था, कि वह महान होगा, जगतके रंगमंच का अद्भुत अभिनेता बनेगा ? कोई जाने या न जाने, समझे

या न समझे, किन्तु हिटलरका बाल-जीवन तो पग-पग पर उसकी महानताकी घोषणा कर रहा था। वह जो भी काम करता, उसमें विभिन्नता होती,उसमें विचित्रता होती। गंभीर, किन्तु उसमें आँधीकी सी प्रचण्ड प्रगति छिपाये हुए बालक-हिटलर हर एक काममें अपने बालक साथियोंसे आगे रहता था। खेलनेमें, कूदनेमे, पढ़नेमें-लिखनेमें, सर्वत्र वह सबसे अग्रसर रहता था। क्यों न हो? वह अग्रसर रहनेके लिये जगतमें उत्पन्न ही हुआ था।

उसका बाप ग़रीब था, साधारण स्थितिका मनुष्य था। माँ थी, एक दरिद्र किसानकी लड़की। किन्तु बड़ी ही चतुर, बड़ी ही दक्ष। चित्रकारीके लिये उसके जीवनमें अधिक प्रेम था। इसीलिये वह चाहती थी, कि हिटलर जगतका एक महान चित्रकार बने। वह हिटलरको समय-समय पर चित्र-कलाकी शिक्षा भी दिया करती थी। किन्तु हिटलरके पिता की हिटलरके जीवनके लिये एक दूसरी अभिलाषा थी। वह हिटलरको देखना चाहता था, किसी उच्च सरकारी पदपर। दोनों अपनी-अपनी अभिरुचिके अनुसार कर रहे थे, हिटलर के जीवनका गठन। किन्तु प्रकृति हिटलरके जीवनको एक दूसरी ही ओर लिये जा रही थी। वह न चित्रकार हो रहा था और न कर रहा था सम्माननीय अफसर बननेके लिये उद्योग। प्रकृति धीरे-धीरे उसे पुरुषार्थके रंगमंचकी ओर खींच रही थी और खींच रही थी राष्ट्रीयताके मैदानकी ओर।

हिटलर इस सम्बन्धमें स्वयं लिखता है - "मैं सरकारी नौकरीके नामसे ही सौ कोस दूर भागता था। विभिन्न विचार संघर्ष और अकाट्य दलीलोंसे भी मैं अपनी धारणासे विचलित न हुआ। बचपनमें मेरे पिताजी मुझसे सरकारी नौकरीकी प्रशंसाके पुल बाँधा करते थे। उन्हें इससे अत्यन्त ही आनन्द प्राप्त होता, यदि मैं सरकारी आफिसमें किसी बड़े ओहदे पर काम करता। परन्तु मेरे विचार ठीक इसके विपरीत थे। मैं नौकरी पेशाके विचारोंके पास भी फटकना नहीं चाहता था। मेरी यह धारणा हो गई थी, कि आफिसोंमें बैठ कर फार्म भरते-भरते मेरा जीवन व्यर्थ ही बीत जायगा।"

तात्पर्य यह कि हिटलरमें बचपन ही में आत्म-गौरव था। और थी पुरुषार्थकी जलती हुई ज्योति! वह बिना किसी आश्रयके ही जीवन-क्षेत्रमें आगे बढ़ना चाहता था और बढ़ता था अपने पुरुषार्थसे, अपनी आत्म-शक्तिसे। वह जीवनके क्षेत्रमें जहाँ तक आगे बढ़ सका है, केवल अपने पुरुषार्थकी शक्ति ही से। उसका पुरुषार्थ ही उसके जीवनका अनन्य सहचर है। वह उसीकी शक्तिसे विपत्तियोंकी गोदमें कूद पड़ता है। उसका साहस धन्य है, उसकी शक्ति वन्दनीय है। वह अपने साहस और अपनी शक्ति ही से जीवनके सर्वोच्च शिखर पर चढ़ सका है और पहुँच सका है, एक ऐसे स्थान पर, जहाँ संसारके बहुत कम व्यक्ति पहुंच पाते हैं, जा पाते हैं।

हिटलर अभी उग ही रहा था कि उसके पिताकी मृत्यु हो

गई। रहा-सहा सहारा भी लुट गया। अब तो वह पूर्णरूप से अनाथ हो गया और हो गया दीन! उस समय उसकी अवस्था केवल सोलह वर्षकी थी। पिताकी मृत्यु हो गई, माँ अस्वस्थ होकर चारपाई पर पड़ी थी और उधर घरमें फूटी कौड़ी भी न थी। हिटलर चिन्तित हो उठा। सामने जीवन का अपार समुद्र और उसे पार करनेके लिये न जहाज और न क्षुद्र नौका। किन्तु किशोर हिटलरको तो जीवन-समुद्रके उस पार जाना था। फिर वह अपने संकल्पको कैसे त्याग सकता था? त्यागनेको कौन कहे, सामने विपत्तिके अगाध समुद्रको लहराता हुआ देखकर उसका साहस गरज उठा, उस का पौरुष जाग पड़ा। वह कपड़ों और कटपीसकी एक पेटी सिर पर लादकर वियनाकी ओर चल पड़ा।

वियनामें अकेला वह किशोर बालक! न किसीसे परिचय और न पासमें जीवन-निर्वाहके लिये साधन! वह अनाथ और निराश्रितकी भाँति वियनाकी सड़कों और गलियोंमें भटकने लगा। किन्तु उसका पुरुषार्थ उसके साथ था, उसका साहस उसके जीवनसे लिपटा हुआ था। वह वही हिटलर— अपने पुरुषार्थकी शक्तिसे जीविकाकी खोज करने लगा। वह चित्रकारी जानता था। वह चित्रोंको बना कर बाजारमें बेचनेके लिये ले गया। किन्तु दुर्भाग्य! किसीने उन चित्रोंकी ओर दृष्टि उठा कर देखा तक नहीं। हिटलरका हृदय आघात से तिलमिला उठा। किन्तु वह निराश न हुआ। कोई उस

के चित्रोंकी ओर दृष्टि उठा कर देख या न देखे, उसे इसकी चिन्ता ही कब थी? वह तो आगे बढ़ना जानता था। उसके हृदयमें पुरुषार्थ था और था साहस। उसने अपने लिये एक दूसरी जीविका खोज ली। वह एक मकान बनानेवाले कारीगरके पास रह कर मज़दूरी करने लगा।

कुछ दिनोंके पश्चात् उसने फिर अपना चित्रकारीका काम आरंभ कर दिया। उसे सफलता मिली और खूब सफलता मिली। उसने अपने पुरुषार्थसे ही अपनेको सुखी बना लिया, बहुत सुखी। आज तो उसके जीवन सुख पर संसार ईर्षा करता है, उसे आश्चर्यकी दृष्टिसे देखता है। उसके पास कुछ नहीं था, किन्तु था पुरुषार्थ, था साहस! उसने पुरुषार्थ और साहसकी शक्तिसे सब कुछ प्राप्त किया, सब कुछ!

२

वह देश भक्त! वही युवक हिटलर! उसने देशमें देखी थी देशकी ग़रीबी, मातृ-भूमिकी हीनता। वह जब अपने देश में ही अपने देशवासियोंको दरिद्रताकी ज्वालामें भुनता हुआ देखता, तब उसका हृदय तड़प उठता, उसके प्राणोंके कोने-कोने में वेदनाकी आँधी दौड़ पड़ती। एक ओर धनके मदमें उन्मत्त होकर चलने वाले थे कुछ अमीर और दूसरी ओर थे असंख्य गरीब, जिन्हें तन ढकनेके लिये न कपड़ा मिल रहा था और न खानेके लिये पेट भर भोजन! हिटलर ऐसे ही बुभुक्षितोंके बीचमें वियनामें रहता था। वह प्रतिदिन उनका दुःख-भरा

क्रन्दन सुना करता था, प्रति दिन दरिद्रताके हृदय-विदारक दृश्य उसकी आँखोंके सामने नाचा करते थे। इन्हीं भयानक किन्तु सकरुण दृश्योंको देखते-देखते वह होगया जर्मनीका अनन्य भक्त! उसके रोम-रोममें जर्मनीकी भक्तिका एक संसार-सा बन गया और वह सब कुछ भूलकर जर्मनीको दुःखोंके बन्धनसे छुड़ानेके लिये प्रयत्न करने लगा।

वह अब अपना सारा काम जर्मनीके लिये करता। वह जर्मनीके लिये पढ़ता और जर्मनीके लिये लिखता भी था। उसके जीवनका एक-एक क्षण जर्मनीकी सेवामें व्यतीत होरहा था। जर्मन होनेका उसे अत्यन्त घमण्ड था और वह उसकी सत्ताकी रक्षामे सदैव मर मिटनेके लिये प्रस्तुत रहता था। इसीलिये जब महायुद्ध छिड़ा, तब उसने जर्मनीकी ओरसे लड़ने के लिये प्रार्थना पत्र भेज दिया। उसका प्रार्थना-पत्र स्वीकृत हो गया और वह युद्ध-भूमिमे जाकर साधारण सिपाहीकी भाँति लड़ने लगा।

वह लड़ रहा था अपने जर्मनीके लिये, अपनी मातृभूमिकी रक्षाके लिये। खाने-पीनेका अभाव, गोला-बारूदोंकी कमी। किन्तु फिर भी वह प्रचण्ड आधीकी तरह आगे बढ़ा चला जा रहा था। उसे अपना ध्यान नहीं था, अपने अस्तित्वकी चिन्ता नहीं थी। वह जगतकी समस्त चिन्ताओंको छोड़कर जर्मनीकी चिन्तामें निमग्न था। युद्धभूमिमें हिटलरके साथी जब उसका पुरुषार्थ देखते, उसके साहसकी ओर निहारते, तब

दांतों तले उँगली दाब लेते थे। वह शक्तिके एक खूंखार दानव की भांति शत्रुओंके संहार कार्यमें जुटा रहता था।

हिटलर युद्धमें दो-तीन बार आहत हुआ। एक बार तो वह मरते-मरते बच गया। उसने सिर पर बड़ी-बड़ी आपदायें भी उठाईं, किन्तु वह निराश कभी न हुआ। वह विपत्तियोंसे आक्रान्त रहने पर भी आंधीकी भांति आगे बढ़ा चला जाता था। निराशा उसकी प्रगतिको न रोक पाती थी और न आशा उसमें दुगुने जीवनका संचार ही करती थी। उसकी प्रचण्ड आंधीकी-सी प्रगतिपर निराशा और आशाका कुछ भी प्रभाव न पड़ता था। वह देखता था एक सुनहला, ध्रुव-सत्य स्वप्न! उसीको लक्ष्य करके अबाधगतिसे वह आगे बड़ा जा रहा था, चला जा रहा था! उसके जीवनका सिद्धान्त था, आगे चलना। इस समय भी वह अपने इसी सिद्धान्तका पालन करता है। समुद्रकी लहरें रुक जाती हैं, वायु, झंझावात को बन्द करके विश्रामकी छाया ग्रहण कर लेता है, किन्तु हिटलर नहीं रुकता। वह केवल चलता जाता है। उसके जीवनकी यही सबसे बढ़ी विशेषता है। उसने अपनी इसी विशेषतासे जर्मनीको खींच कर कहांसे कहां पहुंचा दिया है। उसकी इसी विशेषतासे जर्मनी आज धन्य हो उठा है, गर्वित बन गया है।

अक्टूबरकी एक रात! हिटलर अपने कुछ सैनिकोंको लेकर वारबिकके दक्षिण एक पहाड़ी पर स्थित था। रग-रग

में साहस, नस-नसमें पौरुषका उन्माद ! सामने विपत्तिका अथाह समुद्र था, किन्तु फिर भी उसके हृदयमें साहस उमड़ा पड़ता था, शक्ति जागी पड़ती थी। अँधेरी रात थी और पहाड़ी का मोर्चा। सहसा उस अँधेरी रातमें हिटलर ब्रिटिश सैनिकों से घिर गया। ब्रिटिश सैनिक ज़ोरोंसे गैस बरसाने लगे। कई घंटे तक लगातार अग्निकी गगनचुम्बी लपटे अपना भयानक नृत्य करती रहीं। हिटलरके बहुतसे साथी आहत होगये और बहुत जन्मभूमिकी सेवामें उसीकी गोदमें सदाके लिये सो गये।

हिटलर स्वयं भी आहत हो गया। उसने अपनी उस आहत अवस्थाका स्वयं ही इन शब्दोंमें वर्णन किया है :—प्रातः काल होते २ मुझे बड़ी भयंकर पीड़ा ज्ञात हुई, जो धीरे-धीरे अधिक बढ़ती ही जा रही थी। लगभग सात बजे मेरी आँखें जलने लगीं और मैं एक नयनान्धकी भाँति इधर-उधर भटकने लगा। कुछ ही घंटोंके पश्चात् मेरी आँखें जलते हुए कोयलेके सदृश हो गईं और मेरे लिये चारों ओर अन्धकार छा गया।"

यह है हिटलरकी आहत अवस्थाका एक चित्र ! वह कुछ क्षणोंके लिये अपने जीवनसे भी निराश हो उठा था। किन्तु जर्मनीकी विजय और उसके उत्थानकी आशा सदैव हिटलर के हृदयमें बनी रही। वह अपनी भयंकरसे भयंकर अवस्था में भी अपनी मातृभूमिको न भूला। वह अपनी मातृभूमिके

कल्याणके लिये निरन्तर प्रचण्ड आँधीकी भाँति आगे बढ़ता गया। इसीलिये तो 'जर्मनी' 'जर्मनी' बन गया और हिटलर बन गया वह महान पुरुष, जिसकी प्रचण्ड शक्तिको देख कर आज सारा संसार आतंकित हो उठा है।

३

वह हिटलर! अपनी पितृभूमिका पुजारी! जर्मनीकी दुरवस्था, उसकी आँखोंमें शूलके सदृश गड़ रही थी। यदि उसका वश चलता तो वह समस्त अपमानकारियोंके मस्तकको चूर्ण करके अपनी मातृभूमिको सबसे ऊपर उछाल देता। किन्तु वह विवश था, निरुपाय था। जर्मनी साम्यवादियोंके चंगुलमें पड़कर हिटलरकी दृष्टिसे स्वयं ही सर्वनाशकी ओर जा रहा था। पग-पग पर राष्ट्रीयताका अपमान हो रहा था और हो रहा था मातृभूमिके मानका मर्दन! पितृभूमिका अनन्य पुजारी हिटलर बड़ी पीड़ासे सर्वनाशके इस अभिनयको देख रहा था। किन्तु वह निराश न था, चुप न था। वह अपने प्रचण्ड पौरुषको लेकर आँधीकी भाँति आगे बढ़ता जा रहा था। साधन नहीं, सम्बल नहीं! दल नहीं, संगठन नहीं। किन्तु फिर भी वह जर्मनोंकी सोयी हुई राष्ट्रीयताको खोदकर जगा रहा था। खानेकी चिन्ता नहीं, पहननेकी चिन्ता नहीं। अपनी चिन्ता नहीं, संसारकी चिन्ता नहीं। चिन्ता थी तो जर्मनीकी, पितृभूमिकी। वह रात-दिन, सन्ध्या-सवेरे प्रत्येक क्षण पागलोंके सदृश जर्मनीके गौरवका गीत गाया

करता था और गाया करता था सच्ची आवाज़में, सच्चे हृदयसे ! उसकी अन्तरात्मासे निकली हुई वह सच्ची रागिनी! आखिर जर्मनीकी तन्द्रा टूटी, उसने अँगड़ाइयाँ ली और देखा अपनी ओर। वास्तवमे हिटलरके शब्दोंमे उसे विनाश दिखाई पड़ा और दिखाई पड़ा सर्वनाश ! जर्मनी सचेत हो गया और भक्तिके साथ दौड़ पड़ा हिटलरके मार्ग पर। फिर क्या ? फिर तो हिटलरकी विजय हो गई, महाविजय ! जर्मनी आज हिटलरकी उस विजयसे ही गौरवान्वित है, अधिक महिमान्वित है।

किन्तु इस विजयके लिये हिटलरको बड़ी-बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। कठिनाइयोंका सामना करना पड़ा इसलिये कि वह एक साधारण श्रेणीका मनुष्य था। उसके पास न साधन था, न सम्बल था। यदि कुछ था तो पुरुषार्थ, साहस और प्रचण्ड शक्ति। वह अपने इन्हीं तीन सहचरोंकी महाशक्तिसे विजयी हुआ था और हुआ जगतका एक महान पुरुष ! एक ओर साम्यवादियोंका संगठितदल था और दूसरी ओर हिटलर की असंगठित सेना। संगठित साम्यवादी पग-पग पर हिटलरका भयानक विरोध कर रहे थे। विरोध ही नहीं कर रहे थे, बल्कि हो रहे थे इनके प्राणोंके ग्राहक भी। पर हिटलर जर्मनीके नाम पर साम्यवादियोंकी बड़ीसे बड़ी सभा में भी निर्भयता पूर्वक चला जाता और सिंहकी भाँति दहाड़ कर वहाँसे सकुशल लौट भी आता।

वह दिन! हां वह दिन हिटलरके लिये एक भयंकर दिन था। होफ ब्रौ हौस फैस्ट रूलके हालमें सभा होने जा रही थी और उसमें होने वाला था हिटलरका व्याख्यान। सभा के पूर्व हिटलरको यह समाचार मिला कि साम्यवादी सभा को विध्वंस कर देना चाहते हैं। पर क्या इस समाचारसे वह डर जाता? नहीं; वह अपने थोड़ेसे साथियोंके साथ सभा हालमें जा पहुंचा। उसने वहां जाकर देखा, हाल खचाखच भरा हुआ था। आगन्तुकोंको पुलिस हालमें प्रवेश करनेसे रोक रही थी। साम्यवादी अधिक संख्यामें हालके भीतर बैठे हुए थे। हिटलरने हालमें प्रवेश करते ही सबका द्वार बन्द करवा दिया। फिर उसने अपने साथियोंको अपने समीप बुलाकर कहा, तुम लोगोंको यहां अपनी सच्चाईका परिचय देना है। हममें से कोई भी मनुष्य हालके बाहर न जाने पाये। हमारी लाशें भले ही बाहर चली जायें। यदि मैंने किसी भी व्यक्तिको कायरता प्रकट करते हुए पाया तो मैं स्वयं उसकी वर्दीको फाड़ कर उसका बिल्ला छीन लूंगा। जिस समय तुम मीटिंगको भंग करनेका प्रयत्न होते हुए देखो, शीघ्र आगे बढ़ जाना। इस बातको स्मरण रखना, कि सबसे अधिक रक्षा आक्रमण करने ही में है।

अपने साथियोंको निश्चित आदेश देकर हिटलर सभा-मंचके पास जा पहुँचा। कई सहस्र साम्यवादी उसे घृणाकी दृष्टिसे देख रहे थे। हर एककी दृष्टिकी पैनी कटार हिटलरके

गले पर उतरनेके लिये तड़प रही थी। सब हिटलरको सर्व-नाशकी आगमें झोंकनेके लिये सभामंचके पास बैठकर आँखों से आग उगल रहे थे। हिटलरने एक ही दृष्टिमें सब कुछ जान लिया, सब कुछ समझ लिया। पर वह तनिक भी विचलित न हुआ। वह उन असंख्य विरोधियोंके बीचमें भी सिंहकी भाँति मस्तानी चालसे चल कर सभामंच पर जाकर खड़ा हो गया और व्याख्यान देने लगा।

लगभग डेढ़ घंटेके पश्चात् साम्यवादियोंने अपने क्रोधका अभिनय करना आरंभ कर दिया! लोग चिल्लाने, शोर मचाने और गाली गलौज करने लगे। कुछ देरके पश्चात् कुर्सियाँ भी चलने लगीं। दरवाजा टूट गया। खिड़कियों के शीशे भी चूर-चूर हो गये। लोग उन्मत्तोंके सदृश भागने और वार करनेमें लगे हुए थे। पर हिटलर अविचल भावसे अपने स्थान पर खड़ा था। उसकी दृष्टि अपने साथियों पर थी। सभामें शोर गुल होना आरम्भ ही हुआ था कि उसके साथियोंने साम्यवादियों पर आक्रमण कर दिया। ये साहस के पुतले छोटी-छोटी टोलियोंमें विभक्त होकर भेड़ियोंके सदृश शत्रुओं पर टूट रहे थ। थोड़ी ही देरमें समस्त विरोधी भाग कर हालके बाहर जाकर खड़े हो गये। सभामें फिर शान्ति और फिर सन्नाटा छा गया। हिटलर अपने शेष व्याख्यान को फिर बड़े दर्पके साथ समाप्त करने लगा।

उस दिन उसकी इस विजयको देखकर साम्यवादियोंके

छक्के छूट गये और फिर कभी उन्होंने हिटलरके विरोधका बीभत्स साहस न किया, न किया! क्यों न हो? वह पुरुषार्थ का पुजारी, शक्तिकी मूर्त्ति और साहसका सजीव पुतला है न!

४

क्रान्तिका पुजारी हिटलर! वह जर्मनीके घर-घरमें क्रान्ति की आग लगा देना चाहता था। वह चाहता था, जर्मनी अपनी राष्ट्रीयताका बिगुल बजाता हुआ आगे बढ़े और अपनी प्रचण्ड शक्तिसे खोये हुए अभिमानको फिर प्राप्त करले। इसीलिये वह प्रयत्न कर रहा था और इसीलिये वह प्राणोंको हथेली पर रख कर आंधीकी भाँति वेगवान गतिसे दौड़ा जा रहा था। उसकी प्रचण्ड गतिने जर्मनीको धक्का दिया और वह जाग पड़ा। सब निःसहाय और निरुपाय हिटलरके साथ आगे बढ़नेके लिये हिटलरके मार्ग पर दौड़ पड़े। हिटलर प्राणों की बाजी लगा कर पितृभूमिके कल्याण-मार्ग पर दौड़ लगा रहा था। अपनी लगन और अपने पौरुषसे ही उसने जर्मनी के बच्चे-बच्चेके हृदयमें अपना घर बना लिया। सब उसके संकेतों पर नाचने लगे और सम्मानसे उसकी पूजा करने लगे।

हिटलरको बढ़ती हुई प्रचण्ड शक्ति! एक-एक करके सारे विरोधी ठंडे पड़ गये। सब उसीकी लहरमें बह गये, उसीके स्वरमें स्वर मिलाने लगे। हिटलरने शासनके लिये एक मशविदा तैयार किया था। समस्त देशने एक स्वरसे उसके मसविदेको स्वीकार किया। विरोधियोंने भी उसकी

महत्ताका राग अलापा। शक्ति किसमें थी, साहस किसमें था, जो हिटलरकी आँधी सी प्रचण्ड गतिका अवरोध करता। अभी तक हिटलरका ध्यान जनता ही की ओर था, पर वह अब शासनाधिकारियोंकी ओर आकृष्ट हुआ। उसने शासनाधिकारियोंसे प्रार्थना की, कि वे भी उसके मसविदेको स्वीकार कर लें। किन्तु अधिकारियोंके दरबारमें हिटलरकी आशा पूरी न हुई। अधिकारी कमजोर हाथोंसे जर्मनीको निकम्मा बना कर सर्वदा अपनी अभिलाषाओं ही का अभिनय करना चाहते थे। हिटलर अधिकारियोंकी इस मनोवृत्तिको देख कर क्रोधी सर्पकी भाँति फुफकार उठा और उन्हें पाठ पढ़ानेके लिये कमर कस कर तैयार हो गया।

हर वौन फाहिर था, पुलिसकी शक्तिका एक प्रधान अधिकारी! यदि यह कहीं हिटलरकी बातोंको मान लेता, तो उसका बहुत कुछ काम बन जाता। फिर भला हिटलर उसे कैसे छोड़ने वाला था? १९२३ ई० की आठवीं नवम्बरका दिन था। हर वान फाहिर म्यूनिक नगरके सभा-भवनमें भाषण कर रहा था। सहसा भवनके द्वार पर जाकर एक मोटर खड़ी हो गई। मोटरमें से कुछ व्यक्ति बाहर निकले। सबसे आगे था, वही हिटलर, पुरुषार्थका पुतला। वह अपने साथियोंके साथ सभा-भवनमें आकर खड़ा होगया। हिटलर को सभा-भवनमें देखते ही चारों ओर एक सन्नाटा-सा छा गया। हिटलरने शीघ्र जेबमें से पिस्तौल निकाल कर छतकी

ओर एक गोली चलाई। श्रोताओंके प्राण कांप उठे। हरवान फाहिरकी तो जैसे आत्मा ही प्रस्थान कर गई। हिटलरने संकेतसे उसे अपने पास बुलाया। दोनों पासके एक कमरेमें गये। हिटलरने वहाँ हर वान फाहिरको पिस्तौल दिखा कर उसका हस्ताक्षर अपने मसविदेपर करा लिया। इसके पश्चात् तो कई शासनाधिकारियोंने हिटलरके चरणों पर अपना माथा टेक दिया।

फिर क्या? फिर तो नौ नवम्बरको हिटलरने बर्लिन पर आक्रमण कर दिया। किन्तु उसके साथियोंने ही उसके साथ विश्वासघात किया। शासनाधिकारियोंकी ओरसे उसके दल पर गोली चलाई गई। कई आदमी मरे और अनेक आहत हुए। हिटलर स्वयं भी आहत हो गया था। बहुतसे लोग गिरफ्तार करके जेल भेज दिये गये। बहुतोंको देशनिकाला हुआ। हिटलर भी आहत अवस्थामें ही गिरफ़्तार किया गया। उसे पाँच वर्षके कारावासका दण्ड दिया गया था। किन्तु कुछ ही दिनोंके बाद उसकी सजा घटा कर आठ महीने ही कर दी गई।

शासनाधिकारियोंने समझा, जर्मनीका युवक आन्दोलन सदाके लिये सर्वनाशकी गोदमें सो गया। किन्तु जब हिटलर कारागारसे छूट कर बाहर आया, तब उसने जागृतिका ऐसा राग गाया, कि सारा जर्मनी आन्दोलित हो उठा। थोड़े ही दिनोंके पश्चात् क्रान्तिकी एक ऐसी आग भड़की, कि शासना-

धिकारी उसीमें पड़ कर जल गये, भस्म हो गये। हिटलरकी विजय हुई और महाविजय! चारों ओर हिटलरका कीर्ति-गान, चारों ओर उसकी विजयकी पताका! सारा जर्मनी एक स्वरसे उसका गुणानुवाद करने लगा और वह करने लगा जर्मनीका उत्थान। कुछ ही दिनोंमें जर्मनी हिटलरके समान ही पुरुषार्थी बन गया और बन गया उसीके सदृश वलवान! आज वह अपने पुरुषार्थ और अपनी शक्तिसे ही संसारकी परिस्थितियोंको चीरता हुआ आगे वढ़ता जा रहा है। जो लोग कभी जर्मनीको अशक्त समझ कर उसे सर्वदाके लिये पंगु बना डालनेका प्रयत्न कर रहे थे, वे आज उसकी वढ़ती हुई प्रगतिको देख कर विस्मय कर रहे हैं, आश्चर्य प्रकट कर रहे हैं!

मुसोलिनी

—XoX—

१

इटलीका वह छोटा सा गाँव डोलिया। उसीकी गोदमें रहता था, साधारण स्थितिका एक लोहार, एलेसेण्ड्रो मुसोलिनी। घरका साधारण, पर हृदयका विशाल और बुद्धिका गंभीर। उसीकी भाँति, उसकी स्त्री सिगनोरा रोसा। दया मयाकी मूर्ति थी, सरलताकी ज्योति थी। उसीने तो यह प्रकाश उत्पन्न किया, जिसे आज हम मुसोलिनी कहते हैं और कहते हैं, विश्व-रंगमंचका अद्भुत खिलाड़ी। आज वह गरजता है, दहाड़ता है, सिंहकी भाँति, नर-केसरीके सदृश। सारा संसार कांप उठता है, और कांप उठता है समुद्रका वक्षःस्थल।

बड़-बड़े सम्राटों और बड़े-बड़े शासन सूत्र-धारियोंकी प्रगति रुक जाती है और सब ध्यानसे कान लगा कर सुनने लगते हैं उसकी पुकार, उसकी गर्जना !

किन्तु एक दिन अपने बचपनमें वह था असहाय, संसार की इच्छाओंका इच्छुक ! उसकी मां सिगनोरा रोसा उसकी पढ़ाईके लिये लोगोंसे माँगती थी सहायता, पर कोई सहायता देता ही न था। कोई सहायता दे या न दे, पर मुसोलिनी पढ़ेगा, और अवश्य पढ़ेगा। वह बचपनमें ही लड़ना जानता था विपत्तियोंसे, झगड़ना जानता था परिस्थितियोंसे। ज्ञान की प्यास उसके प्राणोंमें आकुलता उत्पन्न कर रही थी। इसी लिये वह साधनके अभावमें भी पढ़ रहा था और पढ़ रहा था बड़े ध्यानसे। कहीं भी अखबार और पुस्तक पा जाता तो भूखे सिंहकी भाँति उस पर टूट पड़ता। खाता न, पहनता न, पर पुस्तकें अवश्य खरीदता। क्यों न हो ? उसके हृदय में ज्ञानके लिये प्यास थी न !

वर्त्तमान-संसारका महानायक मुसोलिनी बचपनमें ही अधिक चंचल था और था पुरुषार्थी। भयंकरसे भयंकर पीड़ाओंको हँसते-मुसकुराते हुए बर्दाश्त कर लेता था। उसके मनमें एक अशान्तिकी आंधी सी उठा करती थी। वह था तो ग़रीब, किन्तु निरन्तर ऐसी वस्तुओंकी इच्छा किया करता था जो उसे न मिल सकती थी ! उसका चंचल मन ! वह सदैव वायुके साथ उड़ा करता था। रग-रगमें स्वाभिमान, नस-

नसमें आगे बढ़नेकी भावना। क्या मजाल उसके साथका कोई लड़का उसके स्वाभिमान पर आघात पहुंचा दे? जो कभी आघात पहुंचानेका प्रयास करता, वह उसे कुचले बिना कदापि न सन्तोष लेता।

एक बार वह अपने साथके बालकोंमें लकड़ियोंका खेल खेल रहा था। किसी एक एक लड़केका साहस जोर मार गया। उसने मुसोलिनीकी लकड़ी छीन ली और ऊपरसे लोहे के एक औज़ारसे उस पर वार भी कर दिया। मुसोलिसी रोने लगा। वह रोता हुआ घर पर पहुंचा। द्वार पर खड़े थे, मुसोलिनीके पिता। उन्होंने पूछा, क्या हुआ? किसने मारा? मुसोलिनीने उत्तर दिया, एक साथीने। मुसोलिनीके पिताकी आँखें लाल हो उठीं। उसने क्रोधके स्वरमें मुसोलिनीको झिड़कते हुए कहा, कायर कहीं का! मार खाके घर पर शिकायत करने आया है। जा मारने वाले लड़कासे बदला चुका।

बालक मुसोलिनीका प्रकृत स्वाभिमान जाग उठा। आंसू बन्द हो गये, सिसकियाँ जाती रहीं और वह चल पड़ा बदले की भावना भर कर उस लड़केकी खोजमें। मार्गमें ही उसने नुकीले पत्थरके टुकड़े हाथमें ले लिये। कुछ देर तक वह इधर-उधर उस लड़केको खोजता रहा। जब वह मिला, तब मुसोलिनीने चिल्ला कर कहा, सावधान! तुमने मुझ पर वार किया है, अब मैं भी तुझ पर वार करता हूं।' बस फिर

क्या ? उसने उस लड़के पर पत्थरके टुकड़े बरसाने आरम्भ कर दिये। लड़का अधिक चोट खाकर भाग निकला। घटना थी तो बहुत साधारण, किन्तु मुसोलिनीको इससे एक सबक मिला; एक पाठ प्राप्त हुआ। उसकी अन्तरात्माने उसे बताया, कि जो बेईमानी करके दूसरोंको सताता है, वह कायर होता है। मुसोलिनी अपनी अन्तरात्माके दिये हुए इस पाठको इस समय भी बड़े ध्यानसे पढ़ता है, उससे शिक्षा प्राप्त करता है।

मुसोलिनीकी मां सिगनोरा रोसा अध्यापिका थी। मुसोलिनी पहले अपनी मांके ही स्कूलमें पढ़ा करता था। वहां भी उसकी वही चंचलता, वहां भी उसका वही उपद्रव! वह डेस्कके नीचे छिपा रहता और अपने सहपाठियोंके पैरोंमें चुपचाप कांटा चुभो दिया करता था। उसकी मां अध्यापिका थी। शिकायत करनेका किसीमें साहस ही न होता था। यदि कोई साहस करता तो मुसोलिनी एक विचित्र ढंगसे मुंह बना कर उसे भयभीत कर दिया करता था।

इस पाठशालाके पश्चात् वह एक दूसरे स्कूलमें जा पहुंचा। ज्यों-ज्यों वह बड़ा होता जा रहा था, त्यों-त्यों उसकी उद्दण्डता भी बढ़ती जा रही थी। डरना तो वह जानता ही न था। बोलता तो सिंहकी भांति, चलता तो केसरीके सदृश! स्कूलके लड़के उसे अपना नेता मानते, अपना सरदार। जो उसके झंडेके नीचे न आता, वह उसका उपहास करता, अपमान करता। किन्तु शक्ति किस लड़केमें थी, जो उसके झण्डे

के नीचे न आता; उसकी बात न मानता। एककी कौन कहे, सभी उसके संकेतों पर नाचते थे; उसे अपना नेता मानते थे।

स्कूलके समीप ही सेबोंकी एक वाटिका थी। एक दिन मुसोलिनीने अपने दलके साथ वाटिका पर धावा बोल दिया। वाटिकाके मालीने बहुत रोक-थाम की, किन्तु दल का एक लड़का सेबके एक पेड़ पर चढ़ गया। अब मालीने उस लड़के पर गोली चला दी। गोली लड़केके पैरमें लगी और वह पृथ्वी पर आ गिरा। उसका पृथ्वी पर गिरना था नहीं, कि दलके लड़के पवनकी भाँति वहाँसे भाग निकले। किन्तु मुसोलिनी डटा रहा। उसके हृदयमें न भय, और न आशंका। वह एक सच्चे पुरुषार्थीकी भाँति लड़केको पीठपर लाद कर उसके घर ले गया। उसने उसकी सेवा की, उसे सुख पहुंचाया।

लड़का अच्छा हो गया। किन्तु मुसोलिनीका हृदय अपने साथियोंकी कायरता पर भीतर ही भीतर जल रहा था। एक दिन उसने अपने साथियोंकी सभा की, और सबको एक कमरे में बन्द कर दिया। उसने अपने साथियोंको फटकारते हुए कहा, 'मैं निर्लज्ज और कायरोंको अपने दलमें नहीं रखना चाहता। जो कायर हैं, जो आपदाओंको देखकर भागते हैं, उनसे मेरी मित्रता नहीं निभ सकती। मैं तो केवल उन्हीं लोगोंके साथ रह सकता हूं, जो बादलोंकी भांति गरजना और पवनकी भाँति आगे बढ़ना जानते हैं।'

क्यों न हो, वह पुरुषार्थी था न। कायरों और अकर्मण्यों का जीवन-शैथिल्य उसे पग-पगपर असह्य-सा ज्ञात होता था।

२

वह युवक। वही युवक, जिसे आज हम मुसोलिनी कहते हैं और जिसकी गंभीर आवाजको सुनकर सारा युरोप पत्तेकी भाँति काँप उठता है। किन्तु उन दिनों मुसोलिनीके जीवन के ये दिन न थे। न ये राज्य-वैभव और न यह आतंक। वह था केवल एक साधारण पिताका साधारण पुत्र। संसार के प्रखर प्रवाहोंमें बहा जा रहा था। उसी प्रकार बहा जा रहा था, जिस प्रकार असंख्य अगणित, नवयुवक प्रति दिन बहे चले जाते हैं। किसीकी दृष्टि उसकी ओर न थी। न इटली की न रोम की। किन्तु वह रोम और इटलीको प्यार भरे नेत्रोंसे देख रहा था। उसके शरीरके रोम-रोममें इटली घर बनाकर बसा हुआ था। वह जो कुछ करता था, अपने प्यारे इटलीके लिये। इटली उसके जीवनका ध्रुवतारा था और वह उसीको आँखोंमे प्यार भरकर देख रहा था।

उन दिनों वह फार्लिन पीपोलीके नार्मल स्कूलमें पढ़ रहा था। मुसोलिनी था तो विद्यार्थी, किन्तु उसके हृदयमें देश-प्रेमकी ज्वाला छिटक रही थी। वह जब अपने प्यारे रोमकी ओर देखता, तब उसका हृदय वेदनासे मथ उठता और उसके अन्तरके कोने-कोनेमे एक भयानक आँधी-सी दौड़ जाया करती। वह अपने अशान्त हृदयके दहकते हुये भावोंको

सभाओंमें प्रगट भी किया करता था। वह प्रायः कहा करता था, कि नृशंस शासकोंके विरुद्ध मेरा हृदय ग्लानिसे भरा हुआ है।

मुसोलिनीके जलते हुये भाव! शासकोंके कान खड़े हो गये। लोग उसे आशंकाकी दृष्टिसे देखने लगे। ज्यों-ज्यों उसका अशान्त मन देश-प्रेमके पंखोंकी शक्तिसे राजनीतिक-गगन पर द्रुतगतिसे चक्कर लगाने लगा, त्यों-त्यों अधिकारियोंकी दृष्टि भी उसके प्रति अधिक तीव्र होने लगी। अधिकारी उसे स्कूलसे निकाल देना चाहते थे। किन्तु वह अपने एक अध्यापककी सहायतासे, जो उसे अधिक प्यार करता था बच गया।

मुसोलिनी पर अधिकारियोंकी तीव्र दृष्टि थी, किन्तु फिर भी उसकी गति न रुकती थी, वह बिना किसी भयके निर्भयताके साथ अपने पथ पर चला जा रहा था। वह जनताको अपनी ओर आकर्षित करनेके लिये एक अच्छा वक्ता होना चाहता था। इसी लिये वह अपने कमरेको बन्द करके अकेले भाषण देनेका अभ्यास किया करता था। एक दिन जब अपने कमरेमें अकेला मुसोलिनी जोर-जोरसे बोल रहा था, तब उसकी मांने सुन लिया, उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने सोचा, कहीं मुसोलिनी पागल तो नहीं हो गया है। वह दौड़ कर कमरेके द्वार पर गई और आकुलताके स्वरमें कहने लगी, 'बेनिटो' क्या तू पागल हो गया है?

मुसोलिनी हँसा। उसने कहा, 'नहीं मां, मैं पागल नहीं हो गया हूं। मैं उस दिनके लिये तैयारी कर रहा हूं, जब समस्त इटलीमें मेरे अधिकारोंका डंका बजेगा।' वह सचमुच अपने उस दिनकी तैयारी कर रहा था। उसका महत्त्वाकांक्षी हृदय उसी समय अपनी आंखोंसे उस प्रकाशको देख रहा था, जो आज मुसोलिनीके जीवनमें फूटा है और जिसकी गर्वित ज्योतिको देखकर सारा संसार आतंकित-सा हो उठा है! इसीलिये तो उन दिनों मुसोलिनी जो कुछ करता था, उसमें एक निरालापन होता था और होती थी एक महान् विचित्रता! अपनी उस विचित्रतामें मुसोलिनी देखता था, अपने आजकी जीवनकी छाया। इसीलिये वह उस पर अभिमान करता था, दर्प करता था।

नार्मलकी परीक्षा पास करनेके पश्चात् मुसोलिनीका मन कार्य-संसारकी ओर झुका। मनमें आंधी थी, हृदयमें बव-ण्डर था। वह उसीके आवेगमे अपनी एक निश्चित दिशाकी ओर उड़ता हुआ चला जा रहा था। किन्तु जीवन-निर्वाहके लिये कुछ जीविका तो चाहिये ही! उसने कम्यूनमे लिखने-पढ़नेके कामके लिये एक प्रार्थना-पत्र दे दिया। उग्र विचारों से रात-दिन खेलने वाला युवक मुसोलिनी! अधिकारी उसे अपनी आंखोंका कांटा समझने लगे थे। फिर वे उसे नौकरी क्यों देने लगे? उसका पार्थना-पत्र यह कहकर अस्वीकार कर दिया गया, कि तुम्हारी अवस्था अभी बहुत कम है!

अशान्त मुसोलिनीके मनको एक ठेस-सी लगी, एक कर्कश आघातका अनुभव हुआ। ठेस इसलिये लगी, कि लोगोंने जान-बूझकर उसका अपमान किया था। वह अपने स्वावलम्बी तनकी ठेसको लगा कर अपने पिताके पास पहुंचा। उसका पिता भी स्वावलम्बी था और था पुरुषार्थी। वह भी जीवनको समझता था और समझता था मृत्युके रहस्यको। उसने जब मुसोलिनीके मुँहसे उसको प्रार्थना-पत्रवाली बात सुनी, तब उसने कहा, 'बेटा, यह छोटी-सी नौकरी तुम्हारी जैसी आत्माओंके लिये नहीं है। संसारमें निकलो और अपने भाग्यकी परीक्षा करो। भविष्यमें तुम्हें एक बहुत बड़ा आदमी बनना है। तुम आनेवाले युगके एक महान् पुरुष होगे।'

वास्तवमें मुसोलिनी आनेवाले युगका एक महान् पुरुष हुआ और महान् पुरुष हुआ, अपने पुरुषार्थकी शक्तिसे। उस का पुरुषार्थ उसे खींच कर एक ऐसे स्थानमें ले गया, जहाँ पहुंच कर उसका जीवन धन्य हो उठा और धन्य हो उठा, समस्त इटली। उसने अपने पुरुषार्थसे 'इटली' को 'इटली' और 'रोम'को 'रोम' बना दिया। इसीलिये आज इटलीके घर-घरमें उसकी कीर्तिका गान होता है, उसके पौरुषके गीत गाये जाते हैं।

३

युवक मुसोलिनी। उसकी रग-रगमें जीवन था, जागृति थी। वह जैसे जीवन और जागृतिके रथपर निरन्तर सवार

सा रहता था। उसे कभी किसीने अलख भावसे बैठा हुआ देखा ही नहीं। उसका अशान्त मन निरन्तर उड़ा करता था और उड़ा करता था, पवनके सदृश। वह एक स्कूलमें अध्यापकी करता था, किन्तु उसका मन आंधीके सदृश गगनमें चक्कर लगाया करता था। वह जब अपने जीवनके आगे-पीछे देखता, तब उसका मन कह उठता, मुसोलिनी तुम इसलिये नहीं हो कि स्कूलमें अध्यापिकी करो। तुम हो शक्तिकी प्रतिमा। निकलो यहांसे और संसारमें अपनी शक्तिका विकास करो।

अध्यापक मुसोलिनीके अन्तरतमसे निकलती थी निरन्तर यही आवाज। जब वह छोटा-सा था, तब एक वृद्धाने, जिसका नाम जिओवला था, बताया था, कि तुम अपने अन्तःकरणमें देखा करो और जो आवाज उससे निकले, उसे सुना करो, उसके अनुसार काम किया करो। जिओवलाकी इसी बातने मुसोलिनीके हृदयमें अशान्तिकी आंधी उत्पन्न कर दी। अशान्तिकी आंधी उत्पन्न कर दी इसलिये, कि मुसोलिनीकी अन्तरात्मा उससे कह रही थी, कि तुम इसलिये नहीं हो, कि स्कूलमें अध्यापिकी करो। तुम हो शक्तिकी प्रतिमा। निकलो संसारमें अपनी शक्तिका विकास करो।

अन्तरात्माका आदेश। मुसोलिनी इटली छोड़कर दूर देशमें जानेके लिये तैयार हो उठा। पर पासमें पैसे नहीं, साधन नहीं। दूसरे देशमें जाये तो कैसे जाये? वह कुछ

देरके लिये निराश-सा हो उठा। किन्तु निराशाके अंधकारमें उसकी प्यारी मांकी ज्योतिर्मयी मूर्ति दिखाई पड़ी। उसके हृदयमें फिर आशाका प्रकाश दौड़ गया। वह फिर अपने संकल्पके महायानपर सवार होकर मस्तीमें झूमने लगा। उसने अपनी मांको एक पत्र लिखा,—'वह बहुत बीमार है। दवाके लिये रुपये चाहिये।' मा थी, ममताकी मूर्त्ति, दयाकी देवी। अपने लिये चाहे वह कुछ भी न करे, किन्तु अपने मुसोलिनीके लिये वह भीख तक माँगनेके लिये तैयार रहती थी। मुसोलिनी उसकी आँखोंकी ज्योति था, हृदयका बल था। मुसोलिनी भी अपनी माँको अधिक श्रद्धाकी दृष्टिसे देखता था। मांकी ममतामयी मूर्तिको देखकर उसके परीश्रान्त जीवनमें 'जीवन' दौड़ता था। इस समय भी मुसोलिनी अपनी ममतामयी मांको बड़ी श्रद्धाके साथ याद किया करता है। जिस समय मुसोलिनीकी मां इस संसारसे बिदा हो गई, वह पागलोंकी भाँति उसके शव पर गिर पड़ा था। उसने पागलों ही की भाँति उस संज्ञाहीन शवको उलट-पुलट कर बार बार कहा था, 'माँ तुम बोलती क्यों नहीं? बोलो मा! क्या तुम मुझसे रूठ गई?' मुसोलिनीकी माकी क़ब्र जिस स्थान पर बनी है, वहाँ ओकका एक वृक्ष है। बचपन में इसी वृक्षके नीचे मुसोलिनी अपनी माँके साथ खेला करता था। मुसोलिनीने इस वृक्षको न काटे जानेकी आज्ञा निकाल दी है। ओकका यह वृक्ष मुसोलिनीके हृदयके प्यारके रूपमें

निरन्तर अपने पत्ते उसकी मांकी समाधिपर चढ़ाया करता हूं।

हां तो मुसोलिनीकी मां थी, दयाकी देवी, ममताकी मूर्ति। मुसोलिनीका पत्र पाते ही उसने ४५ लायर भेज दिये। यह रकम उसने छः महीनेमें बड़ी कठिनाईसे बचा पाई थी। मुसोलिनी इसी छोटीसी रकमको लेकर स्वीटज़रलैण्डकी ओर चल पड़ा। स्वीटज़रलैण्डमें अकेला मुसोलिनी। न किसीसे परिचय, न किसीसे जान पहचान। पासकी वह छोटी सम्पत्ति भी शेष हो चली थी। सामने विपत्तियोंका अथाह समुद्र था। पर मुसोलिनी जान-बूझकर विना कर्णधारके अपने जीवन तरणीको सागरके मध्यमे लिये जा रहा था। भयानक तरंगे उठती थीं, भीषण थपेड़े लगते थे, तरणी डगमगा जाती थी, पर आत्मवली मुसोलिनी तरंगों तथा थपेड़ोंसे लड़-झगड़ कर अपनी नावको समुद्रके गर्भमे जानेसे बचा लेता था। उसकी नाव थपेड़ोंको चीरती हुई आगे बढ़ी जा रही थी और वही उसका एकमात्र नाविक था, नौसिखुआ खेवंया था।

साधनहीन मुसोलिनी! न किसीसे परिचय, न कोई दुःख-सुखका पूछने वाला! किन्तु इससे क्या? उसका पुरुषार्थ उसके साथ था, उसका आत्मवल उसके समीप था। वह अपने इन्हीं सहचरोंकी शक्तिसे निराशाके सघन अन्धकारमें भी आशाके प्रकाशका दर्शन करता था। जब उसके पासके सब रुपये समाप्त हो गये, तब वह घर बनानेके काममें लग गया। यहां उसे पत्थर सीमेन्ट पहुंचाने पड़ते थे। दिन

भर वह मज़दूरोंके साथ काम करता और रातमें उन्हींके साथ घासके बिछौने पर सो जाया करता था। खानेके लिये केवल थोड़ेसे भुने हुये आलू मिलते थे। किन्तु फिर भी सन्तोष, फिर भी धैर्यकी सांस। भयानक से भयानक आपदायें प्रति दिन जीवन-रंगमंचपर आती थीं और वह सबका करता था उमगोंके साथ स्वागत। उसका दृढ़ विश्वास था, कि एक दिन आपदाओंके स्थानपर सुखकी ज्योतियां आयेंगी और अवश्य आयेंगी। वह अपनी इसी आशा-शक्तिके सहारे वि· पत्तियोंसे लड़ता हुआ जीवन मार्ग पर आगे बढ़ा चला जा रहा था।

घर बनानेकी मजदूरी छूट गई। रहा-सहा जीवन-वृत्ति का तन्तु भी टूट गया। मुसोलिनी अपनी एक छोटी सी पो-टलीको दबा कर एक दूसरे शहरकी ओर चल पड़ा। ठंढी हवा ज़ोरसे चल रही थी। मार्गमें चलना असह्य-सा ज्ञात हो रहा था और फिर उस युवकके लिये, जिसके पैर चलते-चलते थक गये हों, कहना ही क्या है? पग-पगपर विपत्ति थी, पग-पगपर आपदा थी। पासमें न खानेके लिये भोजन और न पहननेके लिये कपड़े। सिर और पेट, दोनोंमें रह-रहकर पीड़ाका ज्वार उठ रहा था। आंखें भूख और थकानसे निकली पड़तीं थी। किन्तु फिर भी युवक मुसोलिनी शक्तिके महारथ पर सवार होकर आगे बढ़ा जा रहा था। देखते-देखते सन्ध्या समीप आगई। पवनकी शीतलता बढ़ गई।

मुसोलिनीके प्राण मारे ठंढके पत्तोंकी भांति कांपने लगे। कुछ देर तक तो वह प्रकृतिके उस कोपसे भी लड़ता-झगड़ता रहा। मगर कब तक? जब सर्दी असह्य हो उठी, तब वह आश्रयके लिये एक ऊँचे भवनके द्वार पर जाकर चिपट खड़ा होगया। उसकी आंखोंके सामने बिजलीकी बत्तियां जगमगा रही थीं। बिजलीके प्रकाशकी छायामें सहस्रों मनुष्य गर्वसे अपना मस्तक उठाये हुए चले जा रहे थे। मुसोलिनी एक बार उनकी ओर देखता था और फिर अपने भाग्यकी ओर। उधर सड़क पर वैभवकी मूर्तियां थीं और इधर मुसोलिनीके हृदयमें भूखकी ज्वाला धधक रही थी, किन्तु उसका तो जन्म ही इसीलिये हुआ था, कि वह दूसरोंके कल्याणके लिये भूखकी ज्वालामें भुने। उसका हृदय दरिद्रों, असहायों और गरीबोंका मित्र था। वह भवन जिसकी छायामें वह खड़ा था और वे मनुष्य जो मस्तीके साथ सड़कोंपर डोल रहे थे, उसकी आखोंमे कांटों की भांति गड़ रहे थे। एक ओर भूखकी ज्वाला थी, दूसरी ओर वैभवका अभिनय। उसकी आत्मा अधीर हो उठी और वह उस छायाको अपने आप छोड़कर उसी ढंगमे वहांसे चल पड़ा।

उसने अपने कोटका कालर ऊपर उठाया। पोटरी बगलमें दबाई और फिर तेजीसे वह सनसनाती हुई हवाके बीचमें जा पहुंचा। और जा पहुंचा एक वृक्षके नीचे, जिसके ऊपर सैकड़ों पक्षी सुखसे बसेरा ले रहे थे। वह भी उसी वृक्षके नीचे सो

गया। उसी ठंढ़में, उसी शीतमें, किन्तु उसके पुरुषार्थी प्राण आकुल न हुए, व्याकुल न हुए। उसने बड़े साहससे, बड़े धैर्य से, कष्टोंका सामना किया, विपत्तियोंसे मोर्चा लिया। उसका साहस, उसका धैर्य, असीम है। उसी प्रकार, जिस प्रकार आकाश और पृथ्वी !

४

उस युवककी तपस्या ! हाँ उसी युवककी, मुसोलिनीकी। वह सचमुच तपस्या कर रहा था, सचमुच साधनामें संलग्न था। उसका देश, उसका वतन, उसके भाई, उसके देशवासी वेदनाकी ज्वालामें तड़प रहे थे, फिर वह क्यों न साधनाकी अग्निमें अपने जीवनको तपाये ? क्यों न आश्चर्यकी यातनाओंमें जान-बूझकर अपनेको डाले ? वह अपने कर्तव्यको जानता था और पहचानता था स्वयं अपनेको। वह इटली की गोदमें पैदा हुआ था। इटलीकी भूमिने उसकी रगोंमें जीवन दौड़ाया था। वह इटलीका था। फिर इटलीकी आपदायें उससे कैसे देखी जा सकती थीं ? वह इसीलिये तपस्या कर रह रहा था, इसीलिये साधनामें रत था। भूखसे व्याकुल फटे कपड़े पहनकर इधर-उधर पथपर फिरता था, पर इटली का मन्त्र जपना उससे न छूटा। सब कुछ छूट गया, किन्तु मातृभूमिकी लगन न छूटी, न छूटी !

परदेशका वातावरण ! युवक मुसोलिनी उन्मत्तकी भाँति दौड़-दौड़कर कामको तलाश करता, किन्तु कोई काम ही न

देता। काम देनेको कौन, कोई हृदयसे बात भी न करता। किन्तु वह निराश न होता। ज्यों-ज्यों उसके जीवनमें निराशाका प्रवेश होता, त्यों-त्यों उसके पुरुषार्थमें और भी अधिक झनझनाहट उत्पन्न हो जाती। ऐसा जान पड़ता, मानों मुसोलिनी निराशासे आशाका सन्देश प्राप्त कर रहा है।

बड़ी कठिनाइयोंसे उसे एक छोटी सी नौकरी मिल गई, शराबकी दूकानमें। वह नौकरी करने लगा। नौकरी करनेसे जो समय बचता, उसे वह पढ़नेमें लगाता था। खाता न, कपड़े न पहनता, पर पुस्तकें अवश्य खरीदता था। पुस्तकें भी वह विचित्र ढंग ही की पढ़ा करता था। कार्ल या बसंकी, क्रान्तिकारियोंकी, और उनकी जिन्होंने दूसरोंके कल्याणके लिये अपनेको जान-बूझकर अत्याचारके अग्निकुण्डमें डाल दिया है। क्यों न हो? उसे अपने देशको जगाना था न!

किन्तु भाग्य! वह तो मुसोलिनीके जीवनके साथ अभिनय कर रहा था। मुसोलिनी, पुरुषार्थी मुसोलिनी पूरी शक्तिके साथ उसका सामना करनेमें लगा था। जीवन-क्षेत्रमे दोनोंका युद्ध हो रहा था और युद्ध हो रहा था, अत्यन्त विकट। कभी भाग्य मुसोलिनीको पछाड़ता, और कभी मुसोलिनी भाग्यको। भाग्यके मनमें चाहे जैसी विचार धारायें रही हों, पर मुसोलिनी तो अपने मनमें सोचता था, कि एक दिन वह अवश्य भाग्यपर अपना प्रभुत्व स्थापित कर लेगा, उसे पछाड़ कर अपने संकेतोंका नर्तक बना देगा!

दुर्भाग्यका अभिनय एकदिन, शराबकी दूकानकी नौकरी भी छूट गई। मुसोलिनी बेकार हो गया। पुनः भूखकी ज्वाला, पुनः आपदाओंका ताण्डव-नृत्य। मुसोलिनी उनसे लड़ता था, बार-बार लड़ता था, अनेक बार लड़ता था। किन्तु उनका क्रम न टूटा, न टूटा! आपदायें बराबर उसके जीवन-रंग-मंच पर आती रहीं। भूख की भयंकर ज्वाला उसकी अँतड़ियोंको भस्म कर रही थी, और बेकारी रह-रह कर उसे महापतन की ओर उसे घसीटे लिये जा रही थी। वह रहे तो कहाँ रहे? कहे तो अपनी दुरवस्थाकी कहानी किससे कहे? उस परदेशमें, उस बड़े शहरमें उसके लिये इञ्चभर भी स्थान नहीं था, जहाँ वह सुख और शान्तिके साथ बैठकर अपने थके जीवनको सान्त्वना प्रदान करता। वह आकुल हो उठा संसारसे, और आकुल हो उठा अपने जीवनसे। आखिर मोन्ट ट्रेसन पार्कमें विलियम टेलकी प्रतिमाके नीचे बैठकर भूखकी भयंकर यंत्रणाओंसे अभिनय करने लगा।

सन्ध्याका समय था। मुसोलिनी विलियम टेलकी प्रतिमा के नीचे बैठकर मन ही मन सोच रहा था। कभी वह अपने इस जीवनसे ऊबकर आत्म-हत्या करनेके लिये उद्यत हो जाता था, और कभी दुखद परिस्थितियोंको चीर कर आगे बढ़नेकी भावना प्रबल हो उठती थी। सहसा अकाशमें किलकिलाते हुये तारे निकल आये। समीपस्थके सागरसे छोटी-छोटी लहरियाँ उड़कर कूलसे टकराने लगीं। ऐसा जान पड़ा, मानों

अकाशके तारे और सागरकी क्षुद्र लहरियाँ मुसोलिनीको नवीन जीवनका सन्देश सुना रही हों। तारोंकी जगमगाहट और लहरियोंकी थपथपाहट से मुसोलिनी जाग पड़ा, उसे उसकी निराशाके धूमिल आकाशमें भी किल-किलाते हुये तारे दिखाई देने लगे। उसका पौरुष जाग पड़ा, वह उठा, और फिर जागृतिकी आँधीके साथ अठखेलियाँ करने लगा।

किन्तु भूख की ज्वाला। मुसोलिनीकी अँतड़ियां बाहर निकली पड़ती थीं। वह अभी अपने स्थानसे उठा ही था, कि उसे दूरसे आती हुई संगीतकी मधुर-लहरी सुनाई पड़ी। दूर पर होटलमें आगन्तुकोंके विनोदके लिये आरचेस्ट्रा बज रहा था। मुसोलिनी कुछ देर तक उसीके उन्मादमें अपनेको भूल गया, और भूल गया भूखकी यंत्रणाको। किन्तु कबतक ? कुछ देरके बाद ही भूखकी ज्वालाने उसे पुनः विवश कर दिया और वह उसी बेबसीकी अवस्थामें चल पड़ा उस होटलकी ओर।

होटलके कमरे भरे थे। लोग विनोदके साथ भोजन कर रहे थे। मुसोलिनी उन्हींके पास उनसे कुछ पैसे माँगना चाहता था। माँगना चाहता था, रात काटनेके लिये एक कमरे के किरायेके लिये। किन्तु भीख। न, न, मुसोलिनी मृत्युकी गोदमें सुखसे सो जायगा, किन्तु भीख कभी न माँगेगा, कभी किसीके सामने हाथ न पसारेगा। वह अपने स्वावलम्बीपन को लेकर बड़े दर्पके साथ होटलके आँगनमें घुसा और भोजन

करने वालोंके सामने जाकर खड़ा हो गया। लोगोंने देखा, उसका विकट स्वरूप, उसकी विचित्र आकृति। लोग आश्चर्य में पड़ गये, विस्मयमें निमग्न हो गये। किन्तु मुसोलिनी शान्त चित्तसे खड़ा था। जैसे वह जो कुछ कर रहा था, उचित और न्यायानुसार ही कर रहा था। कुछ देरके पश्चात् वह बड़े दर्पसे बोल उठा। उसी प्रकार बोल उठा, जिस प्रकार लोग आदेश देते हैं। उसने भोजन करने वालोंसे कहा, मुझे भी रोटीके टुकड़ोंकी आवश्यकता है।

लोगोंने उसकी ओर आँख उठाकर देखा। थोड़ी देरके लिये उस गर्वित मण्डलीमें एक सन्नाटा-सा छा गया। एक मनुष्यने उसकी ओर सहानुभूतिकी दृष्टिसे देखकर उसे रोटीके टुकड़ दे दिये। वह मुँहसे रोटीके टुकड़े तोड़ता हुआ होटल के बाहर निकल गया। भयंकर जाड़ा पड़ रहा था। सन-सन चलता हुआ पवन प्राणोंमें भी कँप-कँपी पैदा कर रहा था। उसपर भी बरसने लगा पानी। आश्रय-हीन मुसोलिनी करे तो क्या करे? जाये तो कहाँ जायें? रोटीके टुकड़े तो उसे मिल गये, किन्तु अब रहनेके लिये स्थान कहाँ मिले? उधर शीतसे प्राण निकले जा रहे थे। मार्गमें पड़ा था, एक बड़ा सन्दूक। मुसोलिनी उसी सन्दूकमें बैठ गया। उसीमें बैठ कर उसने अपनी वह रात बिता दी। सबेरा हुआ, तब वह आवारा समझ कर गिरफ्तार कर लिया गया। वह हवालात में एक गन्दी कोठरीमें रखा गया। उस कोठरीमें मुसोलिनी

का वह एकान्त जीवन। वहां फिर उसके पौरुषने उसे शक्ति प्रदान की, वह फिर जागृति और जीवनका महामंत्र जपने लगा। वह जब हवालातसे बाहर निकला, तब उसके प्राणों में आशा ही आशा थी। ऐसा जान पड़ता था, मानों हवा-लातकी गन्दी कोठरीने उसे शक्ति और पुरुषार्थका कोई नवीन सन्देश दिया हो।

५

क्रान्तिकारी मुसोलिनी! अग्निकी चिनगारियोंके समान जलती हुई इसकी बात चारों ओर फैल चुकी थी। शासक उसे भयकी दृष्टिसे देख रहे थे और देख रही थी जनता भी। वह जहां जिस नगरमें जाता, शीघ्र निर्वासित कर दिया जाता। रहनेके लिये न स्थान मिलता और न करनेके लिये काम। उसके जीवनके वे दिन! बड़े ही संकटापन्न थे, बड़े ही दुरवस्थापूर्ण थे। किन्तु फिर भी स्वाधीनताप्रिय मुसो-लिनीको चिन्ता नहीं, वेदना नहीं। वह आपदाओंसे आग्रस्त रहने पर भी बड़ी मस्तीके साथ जीवन-मार्ग पर चला जा रहा था।

उन दिनों वह एक नगरमें रहता था। वहां उस पर न प्रतिबन्ध थे और न नियन्त्रण। वह स्वच्छन्दताके साथ मजदूरोंमें अपने सिद्धान्तोंका प्रचार कर रहा था। एक दिन राजनैतिक मतभेदके कारण एक व्यक्तिसे उसका झगड़ा हो गया। दोनों निर्णयके लिये पिस्तौल ले-ले कर मैदानमें कूद

पड़े। पिस्तौलें चलीं, किन्तु भाग्यसे किसीको किसी प्रकार आघात न पहुँचा। उस नगरमें पिस्तौलोंसे युद्ध करना कानून के विरुद्ध था। मुसोलिनी इसी अपराधमें बन्दी करके हवालातमें बन्द कर दिया गया।

उस हवालातमें एक और बन्दी था, एक जर्मनी भिखारी। संसारके कष्टोंका मारा हुआ, निराशाका कुचला हुआ। संसार उसकी आंखोंमें कांटेकी भाँति शूल उत्पन्न कर रहा था। यदि उसका वश चलता तो वह संसारमें एक ओरसे दूसरी ओर तक आग लगा देता। वह किसीसे कुछ न बोलता। चुपचाप हवालातमें पड़ा रहता और संसारके साथ ही साथ अपने जीवन पर भी कुढ़ा करता था। कुछ देरके पश्चात् एक दूसरा बन्दी आया, जो इटालियन था। उसके जंघेमें एक बहुत बड़ा घाव था। घावसे रक्त निकल रहा था! पीड़ासे प्राण निकले जा रहे थे। किन्तु फिर भी वह धैर्यसे अपने घावको छिपाये हुए था। वह हत्याके अपराधमें बन्दी हुआ था। यदि पुलिसके आदमी उसका घाव देख लेते, तो फिर उसके अपराधके प्रमाणित होनेमें किसी प्रकारका सन्देह न रह जाता!

उसके पश्चात् ही एक दूसरा बन्दी भी आया। वह इटालियन बोलता था! हवालातके कमरेमें प्रवेश करते ही उसने चारों ओर सूक्ष्म दृष्टिसे देखा। ऐसा जान पड़ा, मानों वह किसी वस्तुकी खोज कर रहा हो। उसे देखकर मुसोलिनी

समझ गया, कि हो न हो, यह गुप्तचर है। इटालियन बन्दी की वेदना उसे भी अधिक व्यथित कर रही थी। क्यों न हो? वह उसके देशका वासी था न। मुसोलिनीने इस नये आने वाले बन्दीकी ओर मुड़कर कहा, यह क्या तमाशा है? मैं तो तुम्हें जानता हूं। तुम एरिओलो नगरसे आये हो। फिर भी तुम अपनेको इटालियन कहते हो और कहते हो, कि हम दोनोंकी भांति तुम भी निर्वासित किये जावोगे।

गुप्तचरकी आकृति पर हवाइयां उड़ने लगीं। उसका सारा रहस्य खुल गया। मुसोलिनीने उसके अन्तरके भावोंको भांप कर फिर कहना आरम्भ किया, तुम स्वीकार करो या न करो, किन्तु मैंने तुम्हारे साथ काम किया है। क्या तुम्हें याद नहीं है? इसके पश्चात् ही मुसोलिनीके स्वरमें घृणाका समावेश हो गया। उसने गुप्तचरको झिड़कते हुए कहा, अब तुम गुप्त-चर बने हो। बधाई है तुम्हारे श्रेयष्कर जीवनके लिये!

बेचारे गुप्तचरको लेनेके देने पड़ गये। दूसरे दिन मुसो-लिनी जेलके गवर्नरसे मिला। उसने गवर्नरके सामने अपनी यह शिकायत पेश की, कि उसके साथ गुप्तचर बन्दी बना कर हवालातकी कोठरीमे रखा गया है। गवर्नरने मुसोलिनीकी शिकायत दूर कर दी। जर्मन भिखारी जर्मनी भेज दिया गया। गुप्तचर वहांसे हटा दिया गया और मुसोलिनीको उसके साथीके साथ इटली भेजनेका प्रबन्ध किया जाने लगा।

मुसोलिनी अपने साथीके साथ इटलीके लिये निर्वासित

कर दिया गया। गाड़ी पर सवार होनेके पहले उसने कपड़े फाड़ कर साथीका घाव कस कर बांध दिया था। पर रक्त का बहना बन्द न हुआ था। कपड़ा रक्तसे तर हो चुका था! रक्त टपक-टपक कर उसके जूतोंमें गिर रहा था। उसके जीवनका दीपक धीरे-धीरे बुझ रहा था। किन्तु वह घावको लोगोंके सामने प्रकट करके फांसीके तख्ते पर मरना नहीं चाहता था। इसलिये जीवनके अन्तिम कालमें भी वह बड़ी कठिनाइयोंसे असह्य यंत्रणाओंको छिपानेका प्रयत्न कर रहा था।गुप्तचर गाड़ीमें इधर-उधर बैठे हुये थे। गाड़ी बहुत धीरे २ चल रही थी। इंजिनमें मालगाड़ीके डिब्बे जुते हुये थे। उधर यंत्रणाओंसे उसका दम टूटता जा रहा था। वह घर पहुंच कर अपनी मांको देखना चाहता था, पर मालगाड़ीको मन्द गति! उस पर भी बैठनेकी जगह नहीं थी। डिब्बा ठसाठस भरा हुआ था। दोनों खड़े-खड़े चल रहे थे, आहत बन्दीका एक-एक क्षण जैसे एक-एक युगके समान बीत रहा था। उसने आकुल होकर मुसीलिनोसे कहा, इटली पहुंचते-पहुंचते मेरे तो प्राण निकल जायेंगे। इटली पहुँच कर क्या तुम्हें अवकाश मिलेगा?

'हाँ' मुसोलिनीने उत्तर दिया।

किन्तु मुझे तो वहाँ पहुंच कर तीन वर्ष तक जेलमें रहना पड़ता, आहत व्यक्तिने कहा। इस प्रकार मुझे वहाँ भी अवकाश न मिलता। परन्तु मेरी जीवन-लीला तो अब समाप्त हो

रही है। इटली पहुंच कर तुम मेरी मांको मेरा हाल बता देना। मुझसे वादा करो, कि तुम ऐसा करोगे। यदि तुमसे हो सके तो तुम उससे जाकर मिल लेना। यदि न हो सके तो उस बुढ़ियाको, उस बेचारी मेरी मांको मेरे सम्बन्धमें लिख देना।'

गाड़ी धीरे-धीरे चल रही थी, इटलीकी सुन्दर पहाड़ियां एक-एक करके आंखोंके सामने आने लगी थीं। आहत बन्दी भी पहाडियोंकी भांति अपनी बातोंको जल्दी-जल्दी समाप्त करने लगा। वह कहने लगा, 'इटलीमें बन्दी रहनेके पश्चात् मैं अपनी बहनके साथ स्वीटज़रलैण्ड गया। मेरी बहन वहां मेरी सहायता किया करती थी। एक दिन दो व्यापारियोंने मेरी बहनका अपमान किया। मैंने उन दोनोंको मार डाला। मेरी बहन किसी प्रकार फ्रांस भाग गई। किन्तु मैं गिरफ्तार कर लिया गया। हत्याका प्रमाण न मिलनेके कारण मैं इटलीके लिये निर्वासित कर दिया गया। किन्तु मैं इटली न पहुंच सकूंगा, वहां पहुँचकर अपनी मांको न देख सकूंगा।'

धीरे-धीरे उसकी वाणी मन्द होने लगी। आकृति पर मुर्दनी छाने लगी। उसका दम धीरे-धीरे टूट रहा था। मुसोलिनी उसकी दुरवस्थाको देख कर मन ही मन अधिक दुःखी हो रहा था। साथ ही संसारके ऊपर उसे क्रोध भी आ रहा रहा था। 'कोमो' पहुँचते दोनों एक दूसरेसे अलग कर दिये गये। मुसोलिनीके ऊपर किसी प्रकारका अपराध नहीं प्रमाणित हो सका था। इसलिये वह गाड़ी खाली होने तक दूसरे

स्थानमें रख दिया गया।

कुछ देरके पश्चात् पुलिस कमिश्नर मुसोलिनीको गाड़ीके पास पहुँचाने आया। मुसोलिनीने पूछा,'मेरा साथी कहाँ है ?'

'क्या तुम सचमुच उसे देखना चाहते हो ?' कमिश्नरने कहा।

'हाँ' मुसोलिनीने उत्तर दिया।

कमिश्नर मुसोलिनीको एक कमरेके पास ले गया! मुसोलिनी द्वार पर खड़ा होगया। कमरा खोल दिया गया। उसने देखा, उसका साथी मरा हुआ बेंच पर पड़ा था। घावसे रक्त टपक-टपक कर पृथ्वी पर गिर रहा था।

मुसोलिनी कुछ देर तक उस दृश्यको देखता रहा। उसकी पुरुषार्थी आत्मा कुछ देरके लिये अत्यन्त आकुल हो उठी। किन्तु वहाँ भी उसने आत्म-नियंत्रणका एक ऐसा पाठ पढ़ा, जो इस समय भी उसके जीवनको उन्नतिकी सुनहली दिशाकी ओर खींचे लिये चला जा रहा है।

६

वह देशका साधक था। वही युवक मुसोलिनी। वह अपने देशमें चारों ओर क्रान्तिकी आग लगा देना चाहता था। वह चाहता था, उसका देश उठे और उठे उसके देशके निवासी। इसीलिये वह घूम-घूम कर, दौड़-दौड़ कर अपने देशको जगा रहा था। खाने-पीनेकी चिन्ता नहीं, सोनेकी परवाह नहीं! परवाह थी तो देशको जगानेकी, मातृभूमिको

ऊपर उठानेकी। कष्टोंकी बड़ी-बड़ी शिलायें मार्गको रोक कर खड़ी हो जातीं, किन्तु वह उन्हें बड़े धैर्यसे, बड़े साहससे हटा कर एक ओर कर देता और फिर जीवन-मार्ग पर आगे बढ़ जाता। वह जानता था केवल आगे बढ़ना। आगे बढ़नेके अतिरिक्त उसे कुछ अच्छा ही न लगता था। मार्गमे पर्वत हों या सागर, पर वह आगे बढ़नेसे न डरता था, न दहलता था। उसका सिद्धान्त था,'जीवनका मोह छोडकर आगे बढ़ो ?'

युरोपीय महासमरकी चिनगारी छिटक चुकी थी। जर्मनी और अस्ट्रियाकी विकराल तोपें चारों ओर गरजने लगी थीं। मुसोलिनी उन दिनों 'अवन्ती'का सम्पादक था। वह अपने उग्र विचारोंके कारण देशमे ऊपर उठ चुका था। उसने साधनासे, तपश्चर्यासे, देशकी दृष्टिको अपनी ओर खींच लिया था। दुर्दिनके काले-काले बादल आकाशके गर्भमे विलीन होते जा रहे थे। सारा देश आंख उठा कर उसकी ओर देख रहा था। उसके साम्यवादी साथी उसके पीछे चलनेमें गौरवका अनुभव कर रहे थे। किन्तु इन्हीं दिनों युद्धकी समस्याको ले कर आपसमें मतभेदकी चिनगारी छिटक उठी। मुसोलिनी युद्धमें ही देशके गरीवों और मजदूरोंका कल्याण समझता था, किन्तु उसके साम्यवादी साथी थे इसके विरुद्ध। मुसोलिनी कहता था, इस समय देशके हर एक नौजवानमें, हर एक वृद्ध में युद्धकी भावना प्रवल होनी चाहिये। किन्तु उसके साथी बजाना चाहते थे शान्तिका सितार! इसलिये उसने

वादिनी पत्रिका 'अवन्ती' से स्तीफा दे दिया। स्तीफा देनेके समय उसका जो वेतन शेष था, उसने उसे भी छोड़ दिया था, और प्रार्थना करने पर भी उसे हाथसे न छुआ था।

उसके साथी ही उसके शत्रु हो गये। साम्यवादी लगे उसे कोसने और लगे गालियां देने। कोई उसे विश्वासघाती कहता तो कोई देश-द्रोही। वह अपने मित्र विरोधियोंकी बातोंको बड़ी शान्ति और बड़े धैर्यके साथ सुनता था। वह उनकी सभाओंमें बेखटके चला जाता और चुपचाप एक कोनेमें बैठ कर उनकी गालियोंको सुना करता। किन्तु उसका धैर्य न टूटता, उसकी शान्तिके तार न उखड़ते। वह अपने मित्र-विरोधियोंसे कहता, कि तुम मुझे घृणा करते हो, इससे यह प्रकट होता है, कि अब भी तुम्हारे हृदयमें मेरे प्रति प्रेम है, मुहब्बत है।

मुसोलिनी साम्यवादियोंकी गालियाँ खाता, उनके वाक्-बौछारोंको सहता, किन्तु निरन्तर आगे बढ़ा चला जाता। वह बात कम करता, काम अधिक। लोग रोकते ही रहते, आवाज़ लगाते ही रहते, किन्तु वह आगे बढ़ जाता, दौड़ जाता। उसकी प्रगतिको देखकर लोगोंको आश्चर्य होजाता, विस्मय होता। 'अवन्ती' को छोड़नेके पश्चात् उसने एक दूसरा पत्र निकाला। 'इल पोपो लो डी इटालिया।' इस पत्रके उसने दो सिद्धान्त रखे थे। एक यह कि 'जिसके पास तलवार है, उसे भूखे रहनेका डर नहीं।' और दूसरा यह कि

'क्रान्ति वह सिद्धान्त है, जिसका पोपण संगीनोंसे होता है।'
सचमुच वह इन्हीं सिद्धान्तोंका पुजारी है। उसकी रग-रगमें
उसके रोम-रोममें इन्हीं सिद्धान्तोंका समावेश है। वह इन्हीं
सिद्धान्तोंकी शक्तिसे वायुमें उड़ा जा रहा है, और उड़ा जा रहा
है, एक उन्मत्त विजयीकी भाँति। संसार उसकी ओर देखकर
दाँतों तले उँगली दवाता है और प्रगट करता है, उसकी प्रगति
पर महा विस्मय !

एक साधारण मकान था। 'इल पोपो लो डी इटालिया'
का दफ्तर। उसीमें तीन-चार मेजें और कुर्सियाँ पड़ी रहती
थीं। मुसोलिनी उसीमें बैठ कर दिन रात काम करता रहता
था। कभी-कभी उसके द्वार पर विरोधियोंकी वहुत भीड़
एकत्र हो जाती। लोग उसे गालियाँ देते, मार डालनेके लिये
धमकाते और मकान पर ईंट-पत्थर भी फेंका करते थे। किन्तु
ऐसी दशामें भी मुसोलिनी दृढ़चित्तसे कुर्सी पर वैठा हुआ काम
करता रहता था। उसकी मेज पर दो पिस्तौलें पड़ी रहती थीं।
एक दिन मुसोलिनीके दफ्तरके सामने विरोधियोंकी अधिक
भीड़ एकत्र हो गई। लोग उसे गालियां दे देकर उसके दफ्तर
पर ईंट-पत्थर फेंकने लगे। वह वड़ी निश्चिन्तताके साथ
गिलासमें रखे हुए दूधको चम्मचसे पी रहा था। उसकी आ-
कृति पर दृढ़ताके भाव थे। क्यों न हो ? वह 'बच्चोंको पीने
के लिये दूध और मनुष्योंको लड़नेके लिये हथियार होने चा-
हिये' सिद्धान्तका पुजारी था न।'

विरोधियोंकी भीड़ द्वार पर एकत्र थी। दफ़्तर पर चारों ओरसे ईंट-पत्थर बरस रहे थे। एक मनुष्यने मुसोलिनीके कमरेमें प्रवेश करके कहा, 'आपको इन लोगोंसे अधिक भय है।' उसकी बात समाप्त भी न होने पाई थी, कि मुसोलिनी का साहस गरज उठा। उसने आंखोंमें पौरुषकी भावना भर कर कहा,-'तुम विश्वास रखो, उसमें एक भी ऐसा आदमी नहीं है जो मेरे कमरेमें प्रवेश करनेका साहस कर सके। वे सब जानते हैं, कि कमरेमें प्रवेश करते मेरी पिस्तौल गोलियां उग-लने लगेगी और उनमेंसे कितने निर्जीव होकर भूमि पर गिर पड़ेंगे।'

वास्तवमें मुसोलिनी विकट पुरुषार्थी है, विकट साहसी है, विकट तेजस्वी है। उसकी आंखोंमें जलती हुई पुरुषार्थकी अ-दम्य ज्योति बड़े-बड़े विरोधियोंके छक्के छुड़ा देती है। वह शक्तिकी पूजा करता है, पुरुषार्थको मस्तक नवाता है। उसने सब कुछ छोड़ कर अपने जीवनमें शक्ति और पुरुषार्थकी बस्ती बसाई है। वह दिन रात आगे चलनेके अतिरिक्त और कुछ जानता ही नहीं! वह अद्भुत कर्मवीर है, अद्भुत विजयी है।

७

वह एक साधारण सिपाही था! वही मुसोलिनी। उसने इटलीके युवकोंमें युद्धकी भावना उत्पन्न करके रण-देवताका वाद्य बजवा दिया। इटली अपनी रक्षाके लिये लड़ने लगा और लड़ने लगा प्रचण्ड शक्तिके साथ। इटलीके युवक देश-

प्रेमकी शराब पीकर पागल हो उठे। मुसोलिनीने उनके प्राणों में एक ऐसी पीड़ा उत्पन्न की, कि वे व्याकुल हो उठे, और उसके उपचारके लिये दौड़ पड़े युद्ध-भूमिकी ओर। स्वयं मुसोलिनी भी एक साधारण सिपाहीकी तरह युद्ध-भूमिमें जाकर डट गया। उसका अदम्य पुरुपार्थ उसका अदम्य साहस! जो उसे भयानक पुरुपार्थके रथ पर चढ़ कर नाचता हुआ देखता, वह दांतों तले उंगली दबाता और कंठ खोलकर उसके अद्भुत साहसकी प्रार्थना करने लगता।

मुसोलिनी युद्धभूमिमें विचरता था, अपने प्राणोंका मोह छोड़ कर। वह प्रति क्षण हथेली पर जान रखे हुये सबसे आगे दिखाई देता था। बमों और गोलियोंकी गोदमें वह स्वदेशके कल्याणके लिये जा कूदता था। जहाँ कोई जानेके लिये तैयार न होता था, वहाँ इटलीका झण्डा लिये हुए मुसोलिनी खड़ा दिखाई देता था। उसकी रण-चातुरी, उसके अद्भुत और सजीव पुरुषार्थ पर उसके सहचर सैनिक लट्टू हो रहे थे। वे जब अपने घरोंको चिट्ठियां लिखते, तब बड़े अभिमानके साथ उनमें यह लिखा करते थे, कि 'कौन जानता था, कि आज मुझे खाइयोंमें मुसोलिनी जैसे व्यक्तिके साथ बैठ कर लड़नेका सौभाग्य प्राप्त होगा।'

दिन भर युद्ध करनेके पश्चात् सन्ध्याको जब मुसोलिनी अपने सैनिक-शिविरमें लौटता, तब सैनिक उसकी वीरताकी प्रशंसाके पुल बांधते। वह सबकी बातें निश्चिन्तता पूर्वक सु-

नता और केवल मुसुकुरा कर रह जाता था। एक दिन सिपाहियोंने मुसोलिनीसे कहा, —'आप बड़े साहसी हैं। आपने गोली और बारूदके बीचमें हमारा नेतृत्व किया है, इसलिये हम लोग आप ही के नेतृत्वमें रहना चाहते हैं।' सिपाहियों की बात सुन कर मुसोलिनी केवल मुसुकुरा कर रह गया। मुसोलिनीका पुरुषार्थ और उसकी महान वीरताको देख कर उसके अफसर उसे एक ऐसे स्थानमें भेजना चाहते थे, जहां जीवनके लिये बहुत कम खतरा था। किन्तु मुसोलिनीने अफसरोंकी इस दयाको अस्वीकार कर दिया। उसने कहा, 'मैं तो अपने साथी सिपाहियोंके साथ खाइयोंमें ही रहना चाहता हूं। इसलिये अन्यत्र कहीं नहीं जा सकता।'

मुसोलिनी युद्धमें बड़े- बड़े से कष्टोंका सामना भी अत्यन्त वीरताके साथ किया करता था। किन्तु वह तो साधक था, और साधक था अपने देशका। उसे दुःखों और सुखों की चिन्ताका अवसर कहां था ? वह तो दोनोंको एक समान समझता था। दुःख हो या सुख, वह केवल आगे बढ़ना जानता था और करना जानता था, निरन्तर काम ! इसकी वीरताको देख करके ही लोग उसे युद्धभूमिमें बड़ासे बड़ा पद देनेके लिये तैयार हो उठे थे, किन्तु जब तक वह अपनी अभीष्ट मंजिल पर नहीं पहुंच गया, एक साधारण सिपाही रहा। इस समय भी जब वह इटलीका अधिनायक है, अपनेको इटलीका सिपाही कहता है। वास्तवमें मुसोलिनीके जीवनका इसीमें

गौरव है, इसीमें महत्व है।

१९१७ की २३ वीं फरवरी का दिन था। युद्ध भूमिमें भयंकर बम-वर्षा हो रही थी। मुसोलिनी उन्मत्तोंकी भाँति दौड़-दौड़ कर शत्रु-सैनिकोंका विध्वंस कर रहा था। शत्रुओं की शिविर छिन्न-भिन्न हो गये थे। तोपें रह-रह कर भयंकर अग्निवर्षा कर रही थीं। सहसा मुसोलिनीका ध्यान तोप की नली पर गया। उसने देखा, नली फट गई है। उसने तुरन्त सेना अध्यक्षसे रुक जानेके लिये प्रार्थना की। किन्तु उसने कहा बस एक वार और। एकबार ओर, किन्तु नली फूट गई, बारूद की चिनगारियाँ वायुमें फैल गईं। अपनी ही ओरके बहुतसे सैनिक आहत हो गये। सेना-अध्यक्ष भी घायल हो गया। मुसोलिनीके शरीरमे भी बम की कीलें घुस गईं। उसका शरीर एक प्रकारसे छलनी हो गया था। वह अस्पतालमें भरती किया गया। एक्सरे द्वारा उसके शरीरकी परीक्षा की गई। शरीरमें बहुत सी विध्वंसक कीलें घुस गई थीं। डाक्टर क्लोरोफार्मसे मुसोलिनीको अचेत करके चीरके द्वारा कीले निकालना चाहते थे। किन्तु मुसोलिनीने अस्वीकार कर दिया। उसने कहा, मैं चीरेके लिये क्लोरोफार्म सूँघनेके लिये तैयार नहीं हूँ। मनुष्यको चाहिये, कि वह भयंकरसे-भयंकर पीड़ाओंको सहन करनेका अभ्यास करे। अन्तमें बिना क्लोरोफार्मके ही चीरा लगा और मुसोलिनी खड़ा-खड़ा मुसकुराता रहा।

इसी समय एक समाचार पत्रने मुसोलिनीका चित्र और उसका अस्पतालमें रहनेका चित्र छाप दिया। बस फिर क्या ? वायुसेनाका एक वायुयान अस्पताल पर दौड़ पड़ा, और लगा बम बरसाने; क्योंकि विद्रोहियोंकी दृष्टिमें मुसोलिनी ही इस युद्धका कारण था, और वे उसे सदाके लिये समाप्त कर देना चाहते थे। अस्पताल पर कई बम गिरे। स्वयं मुसोलिनीके कमरेके पास भी कई बम फूटे। सारे अस्पतालमें श्वेत धुआं छा गया। लोग आकुल होकर इधरसे उधर भागने लगे। अस्पतालके बीमार शीघ्रतासे एक दूसरे स्थानमें भेज दिये गये। किन्तु मुसोलिनी उस बम-वर्षामें भी उसी अस्पतालमें पड़ा रहा। जब प्रलय काण्ड बन्द हो गये, तब उसने अपने देशको एक सन्देश देते हुये बड़े दर्पके साथ कहा,—"आज मेरा हृदय आत्म-गौरवसे भरा हुआ है। मैं अपने देशके कल्याणके लिये अधिकसे-अधिक बलिदान करनेके लिये सर्वदा प्रस्तुत रहता हूं।"

सचमुच वह ऐसा ही अनोखा व्यक्ति है। देश-कल्याण की भावना उसको रग-रगमें समाई हुई है। वह प्रतिक्षण इटली की संवर्धनाके गीत गाता है। इसीलिये इटली अजेय होता जा रहा है, दुर्भेद्य बनता जा रहा है। मुसोलिनीने जिस प्रकार अपनी जान पर खेलकर कष्टोंको सह कर इटली को ऊपर उठाया है, उसे देखते हुये बरबस यह कहना पड़ता है कि वह एक महान दर्द-भोगी है। उसका कर्मयोग दूसरे

देशवालोंके लिये भले ही कल्याण कर न हो, किन्तु उसके देशवासी तो उसे अपने हृदयमें छिपा कर रखते हैं। क्यों न हो? उसने अपने कर्मयोग और पुरुषार्थ ही से तो इटली और इटलीके बच्चोंको जीवनके वास्तविक शान्ति प्रदान की है।

हिन्दीके लब्ध-प्रतिष्ठ और माननीय लेखकोंकी कति-
पय अनुपम रचनायें जो हमारे प्रकाशनकी गौरव हैं।

पथचारी—एक सामयिक एवं सामाजिक मौलिक उपन्यास।
लेखिका श्रीमती ऊषादेवी मित्रा। मूल्य १।)

छाया में—एक उत्कृष्ट मनोवैज्ञानिक कहानी-संग्रह। लेखक श्री
'पहाड़ी'। मूल्य १)

खाली बोतल—एक कलापूर्ण कहानी-संग्रह। लेखक हिन्दीके
अग्रगण्य कलाकार श्री भगवती प्रसाद वाजपेयी।
मूल्य १।)

पड़ोसी—एक सुन्दर कलापूर्ण कहानी संग्रह। लेखक श्री ठाकुर
श्रीनाथ सिंह। मूल्य १।≈)

महावर—ललित कहानियोंका अनुपम संग्रह। लेखिका श्रीमती
ऊषादेवी मित्रा। मूल्य १)

भय्या अक्किल बहादुर—हास्यरसकी अद्भुत देन। लेखक श्री
हास्यरसावतार श्री जी० पी० श्रीवास्तव। मू० १)

वीर-गाथा—वीर रसकी ओजमयी कहानियां। लेखक आचार्य
श्री चतुरसेन शास्त्री। मूल्य १)

ललिता—एक ऐतिहासिक खण्ड-काव्य। लेखक श्री पं० यज्ञदत्त
शर्मा एम० ए०। मूल्य

राजर्षि—एक ऐतिहासिक खण्ड-काव्य। लेखक श्री सरयूप्रसाद
पाण्डेय। मूल्य